संकलन एवं संपादन
डा॰ हफ़ीज़ुर्रहमान

ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन
नई दिल्ली - 110024

प्रथम: प्रकाशन
2024
संख्या : 500

क्या है
ग़ज़्वा-ए-हिंद की हक़ीक़त?

संकलन एवं संपादन:
डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान

हिंदी अनुवाद
परवेज़ अहमद

प्रकाशक:
ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन

संपर्क प्रकाशक:
ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन
डी-319, डिफेंस कॉलोनी
नई दिल्ली-110024
+91-11-47091095

Khusro Foundation
D-319, Defence Colony, New Delhi 110024
www.khusrofoundation.org
khusrofoundation.del@gmail.com

 +91-9318431341
 Khusrofounda
 Khusro foundation
 Khusro_foundation
 Khusrofoundation

कवर: सलामुद्दीन खान
मिलने का पता:
इबारत पब्लिकेशन, नई दिल्ली
संपर्क करें: 9015698045
ibaratpub@gmail.com

सूची

प्रस्तावना **डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान**	**5**
ग़ज़्वा-ए-हिंद की अहादीस की समीक्षा मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ान हिंदी अनुवाद: मुहम्मद ज़कवान नदवी	**9**
ग़ज़्वा-ए-हिंद: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन ए. फ़ैज़ुर्रहमान	**25**
ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस और उसका प्रमाण: एक आलोचनात्मक समीक्षा डॉ. वारिस मज़हरी	**39**
ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित रिवायतें पवित्र क़ुरआन के परिप्रेक्ष्य में मुफ़्ती मुहम्मद अतहर शम्सी	**51**
ग़ज़्वा-ए-हिंद के नज़रिये को रद्द करें मौलाना कल्बे रुशैद रिज़वी	**55**
ग़ज़्वा-ए-हिंद की प्रतीक्षा कौन कर रहा है? अब्दुल मोईद अज़हरी	**59**
ग़ज़्वा-ए-हिंद एक ग़लत नज़रिया *डॉ रुचिका अरोड़ा*	**65**
हिंदुस्तान में ग़ज़्वा-ए-हिंद का प्रोपेगेण्डा डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान	**73**
ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन: एक नई पहल	**83**

प्रस्तावना

"क्या है ग़ज़्वा-ए-हिंद की हक़ीक़त?" के संकलन का उद्देश्य हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान के उग्रवादी संगठनों के राजनीतिक संरक्षण में इस्लाम के नाम पर रचे गये एक काल्पनिक मिथक ग़ज़्वा-ए-हिंद की सच्चाई को प्रकाश में लाना है ताकि भविष्य में किसी हदीस या इस्लामी शिक्षाओं का दुरुपयोग करके कोई भी संगठन या गिरोह हमारे युवाओं का इस्तेमाल अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के लिए न कर सके और इस तरह एक शांतिप्रिय धर्म की शिक्षाओं को विकृत होने से रोका जा सके। पिछले 50 वर्षों के दौरान, पाकिस्तानी और कश्मीरी चरमपंथी संगठनों ने इस प्रचार को फैलाने और जिहाद के नाम पर मुस्लिम युवाओं को गुमराह करने की भरपूर कोशिश की है, जिसके नतीजे में स्वयं भारतीय मुसलमानों को ही ज़्यादा नुक़सान पहुँचा है।

इसलिए अब समय आ गया है कि हम सामूहिक रूप से ऐसी आधारहीन बातों को ख़ारिज कर इसकी वास्तविकता को उजागर करें ताकि युवा पीढ़ी को उज्जवल भविष्य की ओर आकर्षित किया जा सके। इस पुस्तक के लेख अपनी तरह के

अनूठे एवं शोधपरक लेख हैं जो सशक्त तर्कों के साथ अपनी बात प्रस्तुत करते हैं। जिसमें पहला लेख मुहम्मद फारूक़ ख़ान और मौलाना ज़कवान नदवी साहिबान का है, जिसमें ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसों की एक शोध समीक्षा प्रस्तुत की गई है। दूसरा शोध आलेख इंजीनियर ए. फैज़ुर्रहमान का है, जिसमें समकालीन इस्लामी साहित्य के आलोक में वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए इन हदीसों का विश्लेषण किया गया है। तीसरे लेख में डॉ. वारिस मज़हरी ने ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा पर प्रकाश डाला है। चौथे लेख में मुफ़्ती अतहर शम्सी साहब ने इन हदीसों को पवित्र क़ुरआन के सिद्धांत के आधार पर जांचने की बात कही है, जबकि पांचवें लेख में प्रसिद्ध शिया विद्वान मौलाना कल्बे रुशैद रिज़वी साहब ने ग़ज़्वा-ए-हिंद के संबंध में शियाओं की हदीस की किताबों में ऐसी किसी भी हदीस की मौजूदगी से इनकार किया है। छठा लेख जनाब अब्दुल मोईद अज़हरी का है जिन्होंने अल-अज़हर यूनिवर्सिटी के विद्वानों के हवाले से अपनी स्थिति स्पष्ट की है, और सातवें लेख में डॉ. रुचिका अरोड़ा ने अपने अध्ययन और अवलोकन दोनों के आलोक में इसके तर्कसंगत प्रमाणों का खंडन किया है। ग़ज़्वा-ए-हिंद और मीडिया में इसके झूठ पर प्रकाश डाला गया है। अंतिम लेख मेरा स्वयं का है जिसमें प्रस्तुत हदीसों का विश्लेषण करते हुए ग़ज़्वा-ए-हिंद के सिद्धांत का इस्लामी विद्वानों की राय के आलोक में मूल्यांकन किया गया है।

मुझे आशा ही नहीं बल्कि विश्वास है कि यह संक्षिप्त परंतु व्यापक पुस्तिका हमारे प्रिय देश भारत के प्रशासन, मीडिया,

राष्ट्रीय एवं धार्मिक संगठनों, विभिन्न संस्थाओं तथा हमारे युवाओं को इस संबंध में सही राय बनाने तथा झूठे प्रचार को अस्वीकार करने में सहायक होगी जो कि हमारी साझी विरासत और राष्ट्रीय एकता के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि शांति के बिना कोई भी विकास संभव नहीं है। ख़ुसरो फाउण्डेशन किसी भी प्रकार के झूठ पर आधारित विचारधारा को नकारने और सकारात्मक विचारधारा को आगे लाने के लिए प्रतिबद्ध है।

डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान
संयोजक,
ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन

मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ान

मुहम्मद ज़कवान नदवी

‘ग़ज़्वा-ए-हिंद’ की अहादीस की समीक्षा

इस्लाम की शिक्षाएँ बिल्कुल साफ़ और स्पष्ट हैं क्योंकि वे पवित्र क़ुरआन और प्रामाणिक हदीसों पर आधारित हैं। पवित्र क़ुरआन बिना किसी संदेह के सबसे अच्छा है लेकिन चूंकि हदीसों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक प्रसारित किया जाता था और यह ख़तरा था कि पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) के नाम से कोई ग़लत बात न जुड़ जाए, इसलिए उम्मत के सैकड़ों मुहद्दिसीन और विद्वानों ने इस उद्देश्य से अपना जीवन समर्पित कर दिया कि हदीसों के वर्णनकर्ताओं की छानबीन की जाए कि क्या वे विश्वसनीय थे, क्या उनकी याददाश्त सही थी, क्या वे प्रसिद्ध लोग थे? कहीं ऐसा तो नहीं कि व्यक्ति जिसका वर्णन कर रहा है, उससे उसकी मुलाक़ात ही न हुई हो।

हमारे विद्वानों ने इस और ऐसे कई पहलुओं पर काम किया और इसके परिणामस्वरूप एक पूरी कला अस्तित्व में आई जिसे *“इल्म-ए-अस्मा-उर-रिजाल”* कहा जाता है। इसके आधार पर

पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) से वर्णन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की ज़िन्दगी के हालात का पता लगाया गया और उनके कथनों को रिवायत और व्याख्या के दोनों पहलुओं से देखा गया कि क्या वह रिवायत स्वीकार्य है या नहीं।

इस आधार पर मुहद्दिसीन ने हदीसों की जांच की और बताया कि कौन सी हदीसें सही हैं और कौन सी सही नहीं हैं। यही कारण है कि पूरी उम्मत इस बात को जानती है कि धर्म के मामले में केवल पवित्र क़ुरआन या प्रामाणिक हदीसों से ही तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं। हम इस बात से अल्लाह की पनाह माँगते हैं कि कोई ग़लत बात पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) से संबद्ध करें। अत: धर्म किसी कमज़ोर रिवायत पर आधारित नहीं हो सकता। इस उम्मत के इतिहास में अनगिनत लोगों ने हमेशा अपने दावों को कमज़ोर और झूठी रिवायतों पर आधारित किया है। ये कमज़ोर रिवायतएँ पवित्र क़ुरआन की शिक्षाओं के भी ख़िलाफ़ हैं और सही अहादीस के भी ख़िलाफ़ हैं।

हाल ही में "ग़ज़्वा-ए-हिंद" के नाम पर कुछ बेहद कमज़ोर रिवायतों के आधार पर अजीब सियासी दावे किये जा रहे हैं और लोगों को भड़काया जा रहा है। "ग़ज़्वा-ए-हिंद" के नाम पर ये रिवायात पवित्र क़ुरआन के ख़िलाफ़ तो हैं ही, साथ ही साथ दूसरी प्रामाणिक हदीसों और इतिहास के भी विरुद्ध हैं।

इन रिवायात के आधार पर जो दावे किए जा रहे हैं, वे पवित्र क़ुरआन और हदीस की स्पष्ट शिक्षाओं के भी पूरी तरह से ख़िलाफ़ हैं लेकिन वे अपनी इच्छा को धार्मिक आधार प्रदान करने के लिए इनका सहारा लेने की कोशिश कर रहे हैं। अगले

पन्नों में हम इन रिवायात पर विभिन्न पहलुओं से चर्चा करेंगे। दरअसल ये पांच रिवायात हैं।

पहली रिवायत यह है:

> *"अल्लाह मेरी उम्मत के दो समूहों को जहन्नम की आग से बचाएगा। एक वह जो हिंद में लड़ेगा और दूसरा वह जो ईसा इब्न-ए-मरियम के साथ होगा।*

दूसरी हदीस इस प्रकार है:

> *हज़रत अबू हुरैरा कहते हैं कि पैग़ंबर साहब ने हमसे "ग़ज़्वा-ए-हिंद" का वादा किया था। इसलिए यदि मैं इसको हासिल कर लूँ तो उसमें अपना जान व माल लुटा दूँ। और अगर मैं इसमें मारा गया तो सबसे बेहतरीन शहीद होऊंगा और अगर वापस लौटा तो आजाद अबू हुरैरा होऊंगा।"*

तीसरी रिवायत है:

> *हज़रत अबू हुरैरा कहते हैं कि इस उम्मत में सिंध और हिन्दोस्तान की ओर एक फ़ौज रवाना होगी। अगर मुझे ऐसे किसी अभियान में शामिल होने का मौक़ा मिले और मैं उसमें शामिल होकर शहीद हो जाऊं तो ठीक है, और यदि मैं लौट आया तो मैं एक आज़ाद अबू हुरैरा होऊंगा जिसे अल्लाह ने जहन्नम की आग से आज़ाद कर दिया होगा।*

चौथी रिवायत यूँ है:

"निश्चित रूप से आपका एक लश्कर (सेना) भारत के ख़िलाफ़ लड़ेगा। अल्लाह इन मुजाहिदीनों को विजयी करेगा। यहां तक कि वे उनके बादशाहों को बेड़ियों में जकड़ कर लाएंगे। अल्लाह इन मुजाहिदीनों को माफ़ कर देगा। फिर जब वे वापस मुड़ेंगे तो सीरिया में हज़रत ईसा को पाएंगे।" इस पर हज़रत अबू हुरैरा ने कहा कि, "अगर मैंने वह ग़ज़्वा पाया तो अपना नया और पुराना माल सब बेच दुँगा और उसमें हिस्सा लूंगा।" फिर जब अल्लाह हमें विजयी करेगा और हम वापस लौटेंगे, तो मैं एक आज़ाद अबू हुरैरा होऊँगा जो सीरिया की भूमि पर इस शान से आएगा कि वहाँ ईसा इब्ने-मरियम को पाएगा। या रसूलुल्लाह! उस समय मेरी तीव्र इच्छा होगी कि मैं उनके पास पहुँच जाऊँ और उनसे कहूँ कि मैं आपका साथी हूँ। यह सुनकर पैग़ंबर मुस्कुराए और हँसे और कहाः बहुत मुश्किल, बहुत मुश्किल।

पांचवी रिवायत इस प्रकार है:

बैतुल-मक़दिस का एक बादशाह भारत की ओर एक लश्कर (सेना) भेजेगा। मुजाहिदीन भारत की ज़मीन को रौंद डालेंगे। उसके ख़ज़ानों पर क़ब्ज़ा कर लेंगे, फिर वह बादशाह

उन ख़ज़ानों का इस्तेमाल बैतुल-मक़दिस की सजावट के लिए करेगा। वह लश्कर भारत के बादशाहों को बेड़ियों में जकड़ कर अपने बादशाह के सामने पेश करेगा। उनके मुजाहिदीन बादशाह के आदेश से पूर्व और पश्चिम के बीच के पूरे क्षेत्र को जीत लेंगे और दज्जाल के उभरने तक भारत में रहेंगे।

उपरोक्त पाँच रिवायतों में से पहली रिवायत हज़रत सौबान से वर्णित बताई जाती है। तीन रिवायतें हज़रत अबू हुरैरा से रिवायत हैं और आख़िरी रिवायत हज़रत कअब से बयान की जाती है। यदि ग़ौर से जायज़ा लिया जाए तो यह वास्तव में एक ही रिवायत है जिसके विभिन्न भागों का वर्णन इन पांच रिवायतों में किया गया है। ये रिवायतें मुसनद अहमद बिन हंबल और निसाई की "किताब अल-फ़तन" में आई हैं।

रावियों की स्थिति

इन सभी रिवायतों को रावियों के ऐसे सिलसिलों से बयान की गई हैं जिनके हर क्रम में कमज़ोर और अविश्वसनीय रावी मौजूद हैं। इसलिए इन्हें तर्क के रूप में प्रस्तुत करना बहुत ग़लत है, ध्यान देने योग्य बात यह है कि यदि रिवायत के किसी भी भाग में एक भी रावी अविश्वसनीय हो तो वह रिवायत ज़ईफ़ और कमज़ोर हो जाती है। उदाहरण के लिए पहली रिवायत में, असद बिन मूसा नाम के एक रावी हैं जिनको मुहद्दिसीन ने अविश्वसनीय व्यक्ति बताया है। इसमें दूसरे रावी का नाम "बक़िया" है। इनको भी हदीस के विशेषज्ञों ने अविश्वसनीय क़रार दिया है।

इसमें एक और रावी का नाम “यह्या बिन मोईन” है। मुहद्दिसीन के अनुसार यह भी बिल्कुल अविश्वसनीय व्यक्ति हैं। रिवायत की इस श्रृंखला में दो और व्यक्ति हैं। एक हैं अबू बक्र ज़बेदी और दूसरे हैं अब्द अल-आला बिन अदी अल-बरानी। मुहद्दिसीन के अनुसार, ये दोनों “मजहूलुल-हाल” हैं, यानी हमें कुछ नहीं मालूम कि यह कौन हैं, इनके गुरु कौन हैं, यह कब पैदा हुए और कब मृत्यु हुई। ज़ाहिर है कि जो व्यक्ति पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल.) की कोई बात सीधे किसी व्यक्ति से सुनकर उसे आगे भेजता है, वह अवश्य ही कोई जाना-माना व्यक्ति होगा।

इस रिवायत की पूरी श्रृंखला अत्यंत अविश्वसनीय है और अंत में केवल एक सहाबी का नाम ही उल्लेखित किया गया है। ऐसी रिवायत पर कैसे भरोसा किया जाए और उसे धर्म के मामले में सबूत के तौर पर कैसे पेश किया जाए? अन्य चार रिवायतों का भी यही हाल है। इन रावियों में एक शख़्स का नाम ज़करिया बिन अदी है, जिन्हें हदीस के विद्वान अविश्वसनीय मानते हैं। इन रावियों में उबैदुल्लाह बिन उमर और ज़ैद बिन अबी अनीसा भी शामिल हैं। इन दोनों के बारे में मुहद्दिसीन का यह बयान है कि इनके मामले में सावधान रहना चाहिए, क्योंकि इन दोनों में ख़ामियां पाई जाती हैं।

एक और रावी का नाम ज़ुबैर बिन उबैदा है। इस व्यक्ति के बारे में मुहद्दिसीन की राय बहुत ही बुरी है, इसलिए उन्होंने उसे अविश्वसनीय घोषित कर दिया है। एक अन्य रावी “हैशाम” हैं। उनके भी बारे में मुहद्दिसीन की राय बहुत ख़राब है। यह ऐसे लोगों से हदीस रिवायत करते थे जिनसे वे कभी मिले ही नहीं। उपरोक्त दूसरी रिवायत में यह कहा जाता है कि “सफ़वान बिन उमर” ने

इस रिवायत को पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) से सुनाया था। "सफ़वान बिन उमर" तबे-ताबई थे, यानी पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) से किसी सहाबी ने यह बात सुनी होगी। फिर एक ताबई ने उनसे यह बात सुनी होगी और फिर सफ़वान ने इसे सुना होगा। यह ऐसा है जैसे इस रिवायत में कुछ भी ज्ञात नहीं है कि किसने इसे पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) से सुना है, फिर उस सहाबी से किसने सुना। यहाँ न सहाबी का और न ही उस ताबई का नाम मालूम है। जबकि सफ़वान के अलावा बाक़ी रावी भी झूठे और अविश्वसनीय हैं। अब ऐसी रिवायत को धर्म के मामले में कैसे स्वीकार किया जा सकता है?

उपरोक्त हदीसों में तीसरी रिवायत के वर्णनकर्ताओं के सम्बंध में यह कहा गया है कि यह हदीस हसन अल-बसरी ने अबू हुरैरा से सुनी थी। हालाँकि मुहद्दिसीन के अनुसार हसन बसरी कभी हज़रत अबू हुरैरा से नहीं मिले। इसी प्रकार उपर्युक्त रिवायतों में चौथी रिवायत के एक रावी "नईम बिन हम्माद मरुज़ी" हैं। इस व्यक्ति को मुहद्दिसीन और विद्वानों ने झूठा कहा है।

इस क्रम में "बक़िया बिन वलीद" भी शामिल हैं जिनको मुहद्दिसीन अविश्वसनीय कहते हैं। इसी तरह इस रिवायत में एक साहिब सफ़वान बिन उमर कहते हैं कि मैंने यह हदीस अपने एक उस्ताद से सुनी है। अब ये उस्ताद कौन थे? वे विश्वसनीय थे या नहीं? यह कुछ नहीं मालूम। अत: ऐसी निराधार बात को सही रिवायत बताकर तर्क प्रस्तुत करना ग़लत है, जो किसी निष्पक्ष व्यक्ति को शोभा नहीं देता।

इसी तरह पाँचवीं रिवायत के सिलसिले में भी नईम बिन हम्माद का नाम आता है जिन्हें मुहद्दिसीन ने झूठा क़रार दिया है। इस रिवायत के सिलसिले में एक साहब "हकीम बिन नाफ़े" कहते हैं कि मैंने यह हदीस अपने एक उस्ताद से सुनी थी। अब ये उस्ताद कौन हैं और इनकी स्थिति क्या है, इसके बारे में किसी को कुछ नहीं पता। यह हदीस यह नहीं बताती कि इस हदीस को सहाबी "कअब" से किसने सुना। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि ये "कअब" कौन हैं? क्या यह कोई सहाबी हैं? यदि वे सहाबी हैं तो कौन हैं? यदि यह "अबू मलिक काब बिन आसिम अशरी" हैं, तो उनका पूरा नाम यहाँ लिखा क्यों नहीं है? क्योंकि मुहद्दिसीन की यह प्रतिबद्धता है कि जहां भी सहाबी का नाम आता है वे पूरा नाम लिखते हैं ताकि कोई ग़लतफ़हमी न हो और वे "रज़ियल्लाहु अन्हु" भी लिखते हैं, जबकि यहां नाम केवल "कअब" लिखा किया गया है और इसके साथ "रज़ियल्लाहु अन्हु" भी नहीं लिखा गया है। फिर क्या यह "कअब अल-अहबार" हैं जो एक ताबई थी। लेकिन इमाम बुख़ारी के अनुसार वह एक अविश्वसनीय व्यक्ति थे।

कुछ अन्य पहलुओं से रिवायतों की समीक्षा:

उपरोक्त कथनों से यह बात साफ़ हो गयी है कि "ग़ज़्वा-ए-हिंद" से संबंधित ये सभी रिवायतएँ अत्यंत कमजोर एवं ज़ईफ़ हैं तथा इनसे कोई भी दलील प्रस्तुत करना ग़लत है। हालाँकि कोई भी व्यक्ति कह सकता है कि मैं तो इनको सही मानता हूँ। ऐसे लोगों के लिए हम इन रिवायतों के कुछ और पहलुओं पर ध्यान दिलाना चाहेंगे।

* एक तो यह कि इन रिवायतों में “एक लश्कर” का उल्लेख मिलता है। लेकिन जो लोग इस रिवायत का इस्तेमाल अपने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए करते हैं, वे इसका ग़लत अनुवाद “लश्करों” के रूप में कर रहे हैं। जिस भ्रांति के तहत ये लोग “ग़ज़्वा-ए-हिंद” को “एक लड़ाई” के बजाय भारतीय उपमहाद्वीप में होने वाली सभी लड़ाइयों में लागू कर रहे हैं, वह स्वयं इस रिवायत के शब्दों के अनुसार ही ग़लत है।

* इनमें से एक रिवायत में “सिंध” शब्द का भी प्रयोग किया गया है। जबकि सिंध तो इस वक़्त भी मुसलमानों के क़ब्ज़े में है। तो फिर इस पर सैन्य हमले का क्या मतलब है?

इन सभी रिवायतों का जायज़ा लेने से यह स्पष्ट है कि वे भविष्य में एक ऐसे ज़माने का उल्लेख करते हैं जब क़यामत के संकेत बहुत स्पष्ट होंगे। दुनिया की वर्तमान राजनीतिक वास्तविकताएँ पूरी तरह से बदल चुकी होंगी। इसराइल नष्ट हो गया होगा। बैतुल-मक़दिस मुसलमानों के क़ब्ज़े में आ गया होगा। फ़िलिस्तीन, सीरिया, जॉर्डन, इराक, मध्य एशियाई देश, ईरान और अफ़ग़ानिस्तान सभी एक देश बन चुके होंगे। तब एक महान सेना भारत की ओर बढ़ेगी जो इस भूमि को जीत लेगी और इसके शासकों को बंदी बना लेगी। इस जीत से जो धन प्राप्त होगा उसका उपयोग बैतुल-मक़दिस के नवीनीकरण और सजावट के लिए किया जाएगा।

यही वह समय होगा जब हज़रत ईसा फ़िलिस्तीन में अवतरित हो चुके होंगे। इन परम्पराओं के अनुसार यह आवश्यक है कि भारत पर आक्रमण से पूर्व एक विशाल मुस्लिम विश्व

सरकार अस्तित्व में आए तथा इसराइल पर मुसलमानों का कब्ज़ा हो। ज़ाहिर है फिलहाल ऐसा नहीं है।

इस समय इसराइल के ख़त्म होने और मुसलमानों की वैश्विक सरकार की स्थापना की संभावना दूर-दूर तक नज़र नहीं आती। जैसे यदि पहले विश्व में मुसलमानों की सरकार स्थापित हो जाए और इसराइल नष्ट हो जाए तो भारत पर आक्रमण इन्हीं रिवायतों का उदाहरण होगा।

इन रिवायतों में एक अहम बात यह है कि जब यह लश्कर बैतुल-मक़दिस लौटेगा तो हज़रत ईसा अवतरित हो चुके होंगे। प्रामाणिक हदीसों के अनुसार, हज़रत ईसा के अवतरण से पहले, दज्जाल प्रकट होगा, सूरज पश्चिम से उगेगा, और याजूज माजूज हर ऊंचाई से निकलेंगे। दज्जाल के पास इतनी बड़ी शक्ति होगी कि वह कुछ भी कर सकेगा, यहां तक कि वह एक मृत व्यक्ति को भी जीवित कर सकेगा। प्रामाणिक हदीसों में कई अन्य संकेतों का भी उल्लेख किया गया है।

ज़ाहिर है कि इस वक्त अभी न तो दज्जाल प्रकट हुआ है, न सूरज पश्चिम से निकला है और न ही याजूज-माजूज निकले हैं। अतः निकट भविष्य में हज़रत ईसा का अवतरण संभव नहीं है। इसका मतलब यह है कि इस रिवायत के साथ ग़ज़्वा-ए-हिंद की अभी भी संभावना नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि यदि ये रिवायतएँ सही भी हों तो भी इनमें वर्णित स्थितियों के साथ ग़ज़्वा-ए-हिंद दूर-दूर तक संभव नहीं है। इन रिवायतों में क़यामत के दिन के निकटतम समय का उल्लेख है। इनके अनुसार सबसे पहले विश्व में मुसलमानों का साम्राज्य स्थापित होगा, इसराइल

नष्ट हो जायेगा, दज्जाल प्रकट होगा, सूर्य पश्चिम से उदय होगा, हज़रत ईसा का आगमन बहुत निकट होगा या उनका आगमन हो चुका होगा, फिर ग़ज़्वा-ए-हिंद होगा। इसलिए, वर्तमान समय के किसी भी राजनीतिक संघर्ष के लिए ग़ज़्वा-ए-हिंद का प्रयोग पूरी तरह से ग़लत है।

ऐतिहासिक और भौगोलिक भ्रांतियाँ

दुनिया में अलग-अलग देशों के नाम और उनका भूगोल बदलता रहता है। सीमाएँ बदल जाती हैं और नई वास्तविकताएँ सामने आती हैं। इसके साथ ही नामों के अर्थ भी बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए, पंद्रह सौ वर्ष पहले केवल अरब प्रायद्वीप को ही "अरब भूमि" कहा जाता था। आज का अरब विश्व जनसंख्या और क्षेत्रफल में दस गुना बड़ा है। उस समय के चीन और आज के चीन में बहुत बड़ा अंतर है। यही स्थिति हर जगह है।

लेकिन *"ग़ज़्वा-ए-हिंद"* से राजनीतिक अर्थ निकालने वाले कुछ लोग पंद्रह सौ साल पहले की हदीस का वर्णन करते हैं और उसमें वे "हिंद" शब्द का अर्थ आज के भारत से लेते हैं। उस समय "हिंद" शब्द का क्या अर्थ था, यह "उर्दू दायरा-ए-मआरिफ़-ए-इस्लामी, खंड 23, पृष्ठ 173" में लिखा है:

> *"प्राचीन मिस्र के मुस्लिम भूगोलवेत्ता सिंध के पूर्वी क्षेत्रों के लिए "हिंद" शब्द का प्रयोग किया करते थे। हिंद का तात्पर्य दक्षिण पूर्व एशिया के देशों से भी था। इसलिए, जब "हिंद के बादशाह" और "हिंद के इलाक़े" कहा जाता था तो इसका मतलब केवल भारत ही*

नहीं था, बल्कि इंडोनेशिया, मलाया आदि भी शामिल थे और जब "सिंध" कहा जाता था तो इसमें सिंध, मकरान, बलूचिस्तान, पंजाब का कुछ भाग और उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत का कुछ हिस्सा भी शामिल माना गया। ऐसा कोई एक नाम नहीं था जो पूरे भारत पर लागू होता हो। हिन्द और सिंध मिलकर ही हिंदुस्तान का प्रतिनिधित्व करते थे। भारत की भौगोलिक परिस्थितियों का वर्णन अरबी और फ़ारसी में किया गया था, इसलिए इसमें हिंद और सिंध की परिस्थितियाँ भी शामिल थीं। यह भी कहा जाता है कि भारत में मुसलमानों के आगमन से पहले ऐसा कोई नाम नहीं था जिसे पूरे देश में लागू किया जा सके। प्रत्येक प्रांत का अपना अलग-अलग नाम था। जब फ़ारस के लोगों ने इस देश के एक प्रांत पर क़ब्ज़ा कर लिया, तो उन्होंने उस नदी का नाम जिसे अब सिंध कहा जाता है, "हिंधू" रखा, क्योंकि प्राचीन ईरान की पहलवी और संस्कृत भाषा में "स" और "ह" आपस में बदल जाया करते थे। इसलिए फ़ारसियों ने "हिंदहो" कह कर बुलाया। अरब लोग सिंध को केवल सिंध कहते थे लेकिन हिंदुस्तान के अन्य क्षेत्रों को हिंद कहा जाता था और अंततः यह नाम पूरी दुनिया में फैल गया। फिर "ह" के अक्षर को बदलकर "अ" कर

दिया गया और यह नाम फ़्रेंच में "इंड" और अंग्रेज़ी में "इंडिया" के नाम से मशहूर हो गया।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) के समय में जब इस शब्द का प्रयोग किया जाता था, तो "हिंद" का अर्थ केवल भारत ही नहीं था, बल्कि बर्मा (म्यांमार), थाईलैंड, लाओस, कंबोडिया, वियतनाम, मलेशिया, इंडोनेशिया आदि भी थे। अतः इस शब्द का प्रयोग केवल वर्तमान भारत के लिये करना किसी भी तरह उचित नहीं होगा। यही स्थिति "सिंध" शब्द की है। अगर इसे आज के अर्थ में लिया जाए तो सवाल यह है कि "सिंध" में तो सभी मुस्लिम हैं और पाकिस्तान का हिस्सा है। क्या इसे फिर से जीतने का इरादा है?

धर्म की अन्य शिक्षाओं के साथ तुलना

इनमें से अधिकांश रिवायतें अन्य धार्मिक शिक्षाओं से टकराती हैं। उदाहरण के तौर पर इसमें एक जगह हज़रत अबू हुरैरा के शब्दों में कहा गया है कि वह ग़ज़्वा-ए-हिंद के लिए भारत जाने वाली सेना और उसके बाद हज़रत ईसा से मिलने की इच्छा रखते थे। यह इच्छा हर दृष्टि से बिल्कुल असंभव थी। हज़रत ईसा का दूसरा अवतरण क़यामत के लक्षणों में से एक होगा, तो क्या यह संभव था कि हज़रत ईसा पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) के बाद इतनी जल्दी आएँगे कि एक साथी उनसे मिलेगा? यह पवित्र क़ुरआन की आयतों और कई प्रामाणिक हदीसों के ख़िलाफ़ है। तो यह स्पष्ट है कि यह रिवायत गढ़ी गई है और इसमें नमक और मिर्च लगाने के लिए एक मोहतरम सहाबी के नाम का इस्तेमाल किया गया है।

यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि अब क़यामत तक पवित्र क़ुरआन और सुन्नत की शिक्षाओं का पालन करना हमारे लिए अनिवार्य है। युद्ध के लिए धर्म की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में यह शर्त शामिल है कि युद्ध की घोषणा केवल राज्य द्वारा की जा सकती है, युद्ध केवल उत्पीड़न के विरुद्ध हो सकता है। इसी प्रकार शांति समझौते के दौरान युद्ध की अनुमति नहीं हो सकती। युद्ध को सफलतापूर्वक जीतने के लिए पर्याप्त हथियार और उपकरण होने चाहिए।

ये निर्देश क़यामत के दिन तक हमारे लिए अनिवार्य हैं। अत: यदि "ग़ज़्वा-ए-हिंद" होता है तो उसमें भी वही सारी शर्तें लागू होंगी। इसलिए "ग़ज़्वा-ए-हिंद" के नाम पर लोगों में सनसनी फैलाना, सशस्त्र संगठन स्थापित करना, सशस्त्र अभियान चलाना, संधियों को तोड़ना और फिर इन सबको "ग़ज़्वा-ए-हिंद" नाम देकर इस तरह की किसी भी हिंसा को उचित ठहराना सही नहीं होगा.

[जिहाद और क़त्ताल: चंद अहम मबाहिस 128-136]

नोट: "ग़ज़्वा-ए-हिंद" से संबंधित उपर्युक्त रिवायतों के साक्ष्य और वर्णनकर्ताओं की अधिक जानकारी के लिए देखें: जनाब मुइज़ अमजद का लेख "ग़ज़्वा-ए-हिंद", इशराक़ मासिक, फरवरी 1999। और प्रोफ़ेसर डॉ. सिराजुल इस्लाम की किताब "तौज़ीहात" का लेख "ग़ज़वा-हिन्द का निर्धारण"।

मुहम्मद ज़कवान नदवी

मौलाना मुहम्मद ज़कवान नदवी एक इस्लामी विद्वान और नदवतुल उलमा लखनऊ यूपी के स्नातक हैं, लखनऊ में द विज़डम फाउंडेशन एण्ड रिसर्च एज्युकेशनल ट्रस्ट के ट्रस्टी और एक मासिक पत्रिका इशराक़ के संपादक हैं।

✍ ए. फ़ैज़ुर्रहमान

ग़ज़्वा-ए-हिंद:
एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

2023 में, भारत की राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआईए) ने तीन राज्यों में कई स्थानों पर छापे मारे - बिहार के दरभंगा में पांच और पटना में दो; उत्तर प्रदेश में बरेली; और गुजरात में सूरत-"ग़ज़्वा-ए-हिंद" नामक एक समूह के संबंध में, जिसे पाकिस्तान स्थित संदिग्धों द्वारा मुस्लिम युवाओं को "भारतीय धरती पर गज़्वा-ए-हिंद स्थापित करने के लिए" प्रशिक्षित करने के लिए चलाया जा रहा था।

गज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा भी लम्बे समय से हिन्दू राष्ट्रवादियों के मन में रही है। अगस्त 2014 में आरएसएस की पत्रिका आर्गनाइज़र के एक लेख में इंग्लैण्ड के "डेली मेल" के हवाले से कहा गया था कि **"ग़ज़्वा-ए-हिंद अल-कायदा का वैचारिक लक्ष्य है"**, और यह कि "आतंकवादी नेटवर्क वहां काम कर रहा है।" भारत में घुसपैठ कर पूरे देश में अंतिम युद्ध के

बीज बोये जा रहे हैं। लेख में आगे चेतावनी दी गई है कि "न केवल कश्मीरी समूह बल्कि तालिबान और अल-कायदा समूह भी "ग़ज़्वा-ए-हिंद" की भव्य योजना में दांव पर हैं, जहां भारत को 'क़यामत' से पहले एक बड़े युद्धक्षेत्र के रूप में देखा जा रहा है।" इस सिद्धांत का उपयोग तालिबान और अल-कायदा के सहयोगियों द्वारा कश्मीर में प्रवेश करने और विध्वंसक गतिविधियों को अंजाम देने के लिए किए जाने की संभावना है।

"ऑर्गनाइज़र" में फ़रवरी 2020 के एक अन्य लेख में चेतावनी दी गई थी कि "अल-क़ायदा और आईएसआईएस दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप में युवाओं को भर्ती करने के लिए एक-दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं।" दुनिया के अन्य क्षेत्रों (अफ़ग़ानिस्तान, इराक़ और सीरिया सहित), पाकिस्तान, भारत और बांग्लादेश में जिहादी भर्ती को ईश्वरीय समर्थन के प्रतिस्पर्धी दावों से सहायता और प्रोत्साहन मिलता है।

ये चिंताएँ निराधार नहीं हैं। सौफ़ान सेंटर-न्यूयॉर्क स्थित एक स्वतंत्र गैर-लाभकारी संगठन है जो वैश्विक सुरक्षा चुनौतियों को रोकने और प्रतिक्रिया देने के लिए आवश्यक जानकारी, विश्लेषण और सिफ़ारिशें प्रदान करता है। इस सेंटर ने अपनी 2019 रिपोर्ट "भारतीय उपमहाद्वीप में अल-क़ायदा (AQIS): दक्षिण एशिया में जिहाद का केंद्र" में कहा:

AQIS अपने सहयोगी संगठन "अंसार ग़ज़वातुल-हिंद" के माध्यम से कश्मीर के संघर्ष में पूरी तरह से शामिल हो गया है। ज़ाकिर मूसा के नेतृत्व वाले कश्मीर स्थित आतंकवादी समूह हिज़्बुल मुजाहिदीन के एक शक्तिशाली गुट ने एक अभूतपूर्व

घटना में AQIS के प्रति निष्ठा की प्रतिज्ञा की है। कश्मीर में आतंकवाद के इतिहास में एक नए समूह का नाम अंसार ग़ज़वातुल-हिंद रखा गया है। वह कश्मीर में भी अपना नैरेटिव मज़बूत कर रहा है। यह कश्मीर को विकेंद्रीकृत करने के प्रयास में जिहाद की वैचारिक शब्दावली और संघर्ष के औचित्य के स्रोतों दोनों को बदलने के अपने प्रयासों के माध्यम से AQIS द्वारा उत्पन्न संभावित ख़तरे को दर्शाता है। दक्षिण एशिया में जिहादियों द्वारा जारी एक बयान में मूसा ने कहा कि “कश्मीर जिहाद केवल शरिया के कार्यान्वयन के लिए होना चाहिए, न कि राष्ट्रवादी आदर्शों के लिए। पाकिस्तान में इस्लाम नहीं है इसलिए हमें पाकिस्तान के ख़िलाफ़ भी जिहाद छेड़ना होगा।”

ग़ज़्वा-ए-हिंद: एक विश्लेषण

हदीस के संदर्भ में ग़ज़्वा एक सैन्य अभियान को संदर्भित करता है जिसमें पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) ने स्वयं भाग लिया था। [पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) के] सैन्य अभियान। ऐसी दो प्रसिद्ध घटनाएं इतिहासकार इब्न-ए-इस्हाक़ (मृत्यु 768 ई.) और अल-वाक़दी (मृत्यु 823 ई.पू.) द्वारा वर्णित हैं। अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बिन हम्माम अल-सानआनी (मृत्यु 827 ईस्वी) के हदीस संग्रह में “मुस्हफ़” में भी किताब अल-मग़ाज़ी अध्याय शामिल है।

लेकिन ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसों में ग़ज़्वा का प्रयोग इसके शाब्दिक अर्थ में किया गया है, जिसका अर्थ है “युद्ध और लूट का अभियान”, या “हमला”, “आक्रामकता”, और “विजय का अभियान”। दूसरे शब्दों में, ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसों में पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) का उल्लेख किया गया है कि

उन्होंने भारत के विरुद्ध अकारण “लूट के अभियान” और “विजय के अभियान” को न केवल उचित ठहराया बल्कि उसकी प्रशंसा भी की।

सौफ़ान सेंटर द्वारा पहचाने गए भारत के दुश्मनों ने शांतिपूर्ण भारतीय मुसलमानों को अपने ही देश के ख़िलाफ़ विद्रोह करने के लिए उकसाने के लिए इन अप्रामाणिक हदीसों का इस्तेमाल किया है। लेकिन कोई भी उग्रवादी संगठन (विदेशी या स्थानीय) मुसलमानों के संयम और देश के प्रति वफ़ादारी के क़िले को नहीं तोड़ सकता।

आईएसआईएस और अल-क़ायदा जैसे आतंकवादी संगठनों को ख़ारिज करने के भारतीय मुसलमानों के संकल्प को और मज़बूत करने के लिए ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित तीन सबसे ज़्यादा प्रयोग होने वाली हदीसों का विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है:

1. पहली हदीस सुनन-नसाई से है, जो इमाम अहमद नसाई द्वारा संकलित हदीसों का एक संग्रह है।

रसूलुल्लाह (सल्ल.) के द्वारा मुक्त ग़ुलाम सौबान (रज़ि.) से वर्णित है कि रसूलुल्लाह (सल्ल.), ने फ़रमाया: “मेरी उम्मत के दो समूह हैं जिन्हें अल्लाह जहन्नम से आज़ाद करेगा: एक वह समूह जो भारत पर हमला करेगा और दूसरा वह समूह जो ईसा बिन मरियम (अलै.) के साथ होगा।

2. दूसरी हदीस: अबू हुरैरा (रज़ि.) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने वादा किया कि हम भारत पर आक्रमण

करेंगे, यदि मैं जीवित रहा तो मैं अपना जीवन और धन बलिदान कर दूंगा, यदि मैं मारा गया तो मैं सबसे अच्छे शहीदों में से एक और अगर मैं वापस लौटा तो अबू हुरैरा अल-मुहर्रिर होउंगा।

3. तीसरी हदीस नईम बिन हम्माद अल-मरवाज़ी द्वारा लिखित किताब अल-फ़तन में मौजूद है।

अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा: मेरी उम्मत का एक समूह भारत पर आक्रमण करेगा तो अल्लाह तआला उन्हें विजयी करेगा। जब वे भारत के राजाओं को ज़ंजीरों में जकड़ कर वापस लाएंगे तो अल्लाह उनके गुनाहों को माफ़ कर देगा। वे सीरिया लौटेंगे, और ईसा इब्न-ए-मरियम (अलै.) को सीरिया में पाएंगे।

तीसरी हदीस का एक और अनुवाद कुछ इस प्रकार है:

हम से बक़िया बिन वलीद ने सफ़वान से कुछ उलमा ने अबू हुरैरा (रज़ि.) से रिवायत की। उन्होंने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने भारत का उल्लेख किया और कहा: तुम्हारी एक सेना भारत पर आक्रमण करेगी। जब तक कि वह उसके राजाओं को ज़ंजीरों में बाँध कर नहीं ले आते। अल्लाह उनके गुनाहों को माफ़ कर देगा, इसलिए वे जहां भी जाएंगे, मरियम के बेटे को सीरिया में पाएँगे।

संक्षिप्त विश्लेषण

पहली हदीस को सुनन नसाई के लेखक ने हसन के रूप में वर्णित किया है। लेकिन एक मुस्लिम पोर्टल “इस्लाम सवाल व

जवाब" का कहना है कि अल्लामा नसीरुद्दीन अल-अल्बानी ने अपनी पुस्तक अल-सिलसिलतुल-सहीह में इस हदीस को प्रामाणिक बताया है। दिलचस्प बात यह है कि "इस्लाम सवाल व जवाब" दूसरी वर्णित हदीस को कमज़ोर मानता है।

"इस्लाम सवाल व जवाब" तीसरी हदीस को भी कमज़ोर कह कर ख़ारिज करता है क्योंकि अल-वलीद बिन मुस्लिम ने इसे सुनाया है। यह एक संदेशवाहक भी प्रतीत होता है क्योंकि इस बात का कोई सबूत नहीं है कि जिसने भी सफ़वान बिन उमर (रज़ि.) से यह कहा है उसने इसे पैग़ंबर (सल्ल.) से सुना है या फिर किसी सहाबी से।

"इस्लाम सवाल व जवाब" का समापन यह कहते हुए करता है: "हदीस सौबान वह है जो भारत की विजय के संबंध में प्रामाणिक है। जहां तक अबू हुरैरा (रज़ि.) की हदीस का सवाल है, इसके अधिकतर प्रमाण कमज़ोर हैं।

यहां इस बात की ओर इशारा किया जा सकता है कि "इस्लाम सवाल व जवाब" की उपर्युक्त हदीसों को स्वीकार करने और अस्वीकार करने का आधार वर्णनकर्ताओं की प्रामाणिकता पर आधारित है, न कि उनके लेख या सामग्री पर। दरअसल, सभी हदीसों की प्रामाणिकता का आकलन मुहद्दिसीन ने सबूतों के आधार पर ही किया है। इसका नतीजा यह हुआ कि संदिग्ध सामग्री वाली कई हदीसें प्रामाणिक घोषित कर दी गईं।

इस विरोधाभासी दृष्टिकोण का एक स्पष्ट उदाहरण "इस्लाम सवाल व जवाब" में पहली उद्धृत हदीस को उसकी

संदिग्ध सामग्री के बावजूद प्रामाणिक के रूप में वर्गीकृत करना है, जिसमें पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) यह भविष्यवाणी करते है कि भविष्य में दो विशिष्ट मुस्लिम समूह क्या करेंगे और उनके कर्म उन्हें जहन्नम से कैसे बचाएंगे।

पवित्र क़ुरआन केवल आत्मरक्षा में सशस्त्र संघर्ष की अनुमति देता है, जैसा कि ये आयतें स्पष्ट करती हैं।

> *उन लोगों को जिनसे लड़ाई और अत्याचार किया जा रहा है उनको (लड़ने की) अनुमति दी गई है और वास्तव में ख़ुदा उन्हें विजय दिलाने की पूरी शक्ति रखता है। (39:22)*

> *और अगर वह अपने वादे के बाद अपनी क़समें तोड़ दें और तुम्हारे धर्म को बदनाम करें तो इनकार करने वालों से लड़ो, क्योंकि उनके लिए कोई क़सम नहीं है। [उनसे लड़ो] वे ख़त्म हो सकते हैं। क्या तुम ऐसे लोगों से नहीं लड़ोगे जिन्होंने अपनी क़समें तोड़ दीं और रसूल (सल्ल.) को निकालने की साज़िश रची और सबसे पहले तुम पर हमला किया?*
>
> *(12-13:19)*

एक अन्य आयत में पवित्र क़ुरआन कहता है कि उन लोगों में से जो शैतान की चालों से प्रभावित नहीं होते हैं, वे लोग हैं जो हमला होने पर ख़ुद का बचाव करते हैं।

...जो लोग ईमान रखते हैं, अच्छे कर्म करते हैं, ख़ुदा की याद में बहुत व्यस्त रहते हैं, और जब उन पर अन्यायपूर्ण हमला किया जाता है, तो वे अपना बचाव करते हैं और जल्द ही क्रूर हमलावरों को पता चल जाएगा कि उनके मामले उलटफेर लिए जाऐंगे! (26:227)

पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) पवित्र क़ुरआन के इन आदेशों के प्रति सच्चे थे। उन्होंने जो भी युद्ध लड़े वे आत्मरक्षा में लड़े। इसलिए किसी भी देश के ख़िलाफ़ युद्ध का सवाल ही नहीं उठता।

इसके अलावा, हदीसों की सभी किताबें मानव संकलन हैं, वे अल्लाह के शब्द पवित्र क़ुरआन के अधीन हैं। यह किसी भी ऐसी हदीस को अप्रभावी बना देता है जो पवित्र क़ुरआन की भावना के ख़िलाफ़ हो। दूसरे शब्दों में, हदीस की प्रामाणिकता को केवल पवित्र क़ुरआन के साथ इसकी संगतता के आधार पर सत्यापित किया जा सकता है क्योंकि सत्यापन की विधि हदीस की सामग्री को ध्यान में नहीं रखती है। इस दृष्टि से ग़ज़्वा-ए-हिंद की सभी हदीसों को अप्रामाणिक मानकर ख़ारिज करना होगा।

भारतीय मुसलमानों का संयम

जैसा कि ऊपर बताया गया है, 20 करोड़ भारतीय मुस्लिम समुदाय शायद दुनिया का एकमात्र इस्लामी समाज है जो किसी भी चरमपंथी विचारधारा का समर्थन नहीं करता है। इस तथ्य का समर्थन तब किया गया जब जुलाई 2023 में भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार श्री अजीत डोभाल ने बताया कि बड़ी आबादी

के बावजूद वैश्विक आतंकवाद में भारतीय मुसलमानों की भागीदारी "अविश्वसनीय रूप से कम" है।

इससे पहले, सितंबर 2014 में, नरेंद्र मोदी के भारत के प्रधानमंत्री के रूप में कार्यभार संभालने के तुरंत बाद उन्होंने एक साक्षात्कार में सीएनएन के फ़रीद ज़करिया से कहा था: "मुझे लगता है कि वे (अल-क़ायदा जैसे आतंकवादी संगठन) हमारे देश के मुसलमानों के साथ अन्याय कर रहे हैं। अगर कोई यह सोचता है कि भारतीय मुसलमान उसके इशारों पर नाचेंगे, तो वह भ्रम में हैं। भारतीय मुसलमान भारत के लिए जिएंगे, भारत के लिए मरेंगे, वह भारत के लिए कुछ भी बुरा नहीं चाहेंगे।" यह ज़करिया के उस सवाल के जवाब में दिया गया जिसमें ज़करिया ने नरेंद्र मोदी से पूछा था कि क्या वह (मोदी) भारत में अल-क़ायदा की एक वीडियो के बारे में चिंतित हैं जिसमें हिंदुस्तान में अल-क़ायदा का अड्डा बनाने के प्रयास की घोषणा की गई थी।

तीन साल बाद तत्कालीन गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने भी प्रधानमंत्री की बात को दोहराते हुए कहा "मैं पूरी ज़िम्मेदारी के साथ कह सकता हूं कि (भारत में मुसलमानों की) इतनी बड़ी आबादी के बावजूद आईएसआईएस भारत में अपने क़दम जमाने में कामयाब नहीं हो सकी है."

भारत के शीर्ष नेतृत्व की मुस्लिम समुदाय में आस्था की तथ्य आधारित पुष्टि एक बार फिर द सौफ़ान सेंटर द्वारा प्रदान की गई है। अक्टूबर 2017 की अपनी रिपोर्ट में, केंद्र ने 75 भारतीयों को "विदेशी लड़ाकों" के रूप में सूचीबद्ध किया था, जो हिंसक

चरमपंथी समूहों में शामिल होने के लिए सीरिया और इराक़ गए थे।

तुर्की के अधिकारियों के हवाले से रिपोर्ट में ख़ुलासा किया गया है कि 146 देशों के कुल 53,781 लोग अपने देश की सुरक्षा के लिए ख़तरा हैं और सीरिया और इराक़ में लड़ाई में शामिल होने की कोशिश कर सकते हैं। ये आंकड़े जून 2017 के मध्य तक के थे।

हालाँकि किसी आतंकवादी संगठन में शामिल होना एक बेहद आपराधिक और निंदनीय कृत्य है, लेकिन भारत में ऐसे समूहों के लिए लड़ने के लिए स्वेच्छा से लड़ने वाले मुसलमानों का प्रतिशत (53,781 में से 75) काफ़ी असाधारण था। भारत में मुसलमानों की संख्या के संदर्भ में, यह संख्या अनुमानित 20 करोड़ में से 75 और भी अधिक नगण्य है, और यह दर्शाती है कि समग्र रूप से समुदाय ने हिंसक उग्रवाद से परहेज़ किया है। जिससे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के उस रुख़ को बल मिलता है कि भारतीय मुसलमान देश का शांतिप्रिय और वफ़ादार नागरिक है।

दिलचस्प बात यह है कि जनवरी 2019 की अपनी रिपोर्ट में, सौफ़ान सेंटर ने ख़ुलासा किया कि कैसे भारतीय मुसलमान अल-क़ायदा के भौगोलिक केंद्र के क़रीब होने के बावजूद जिहादी बयान से ख़ुद को दूर रखने में कामयाब रहे हैं। जून 2013 में जारी एक वीडियो संदेश में भारतीय मुसलमानों के बीच जिहादवाद में गिरावट पर दुख जताते हुए उन्होंने मुसलमानों से उत्तेजक तरीक़े से पूछा: "आपके समन्दर में तूफ़ान क्यों नहीं उछल रहा।" भारतीय मुसलमानों के समुद्र में कोई तूफ़ान नहीं है क्योंकि

वे स्वाभाविक रूप से उदारवादी हैं और उन्होंने पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) की निम्नलिखित चेतावनी को गंभीरता से लिया है:

> *धार्मिक मामलों में हद से गुज़रने से बचो क्योंकि जो लोग तुमसे पहले आए थे वे धार्मिक मामलों में हद से आगे बढ़ने के कारण नष्ट हो गए।*
>
> ***(सुनन नसाई की किताब मनासिक अल-हज)***

फिर भी आज हिंदुओं और उनके धर्म को बचाने के नाम पर मुसलमानों की गैर-न्यायिक हत्याएं, मस्जिदों को जलाना, मुसलमानों के सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार की मांग और मुसलमानों को शहर छोड़ने या घर ख़ाली करने की चेतावनी ने हमारी आँखें खोल दी हैं, यह सत्य है कि संयम की आवश्यकता किसी एक समुदाय के सदस्यों तक ही सीमित नहीं है।

सितंबर 2014 में हमारे प्रधानमंत्री ने ज़ोर देकर कहा था कि भारत की अहिंसा के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता है और यह भारतीय समाज के डीएनए में अंतर्निहित है। इस बात पर और ज़ोर देने के लिए उन्होंने पूछा: “जब हम पूरी दुनिया को एक परिवार मानते हैं तो हम ऐसा कुछ भी करने के बारे में कैसे सोच सकते हैं जिससे किसी को नुक़सान पहुंचे?”

हिंसा में शामिल भारतीयों को यह एहसास नहीं है कि वे न केवल हमारे प्रधानमंत्री के अहिंसा के संदेश के ख़िलाफ़ जा रहे हैं बल्कि भारत को विश्व गुरु (विश्व नेता) बनाने के उनके सपने को भी साकार होने से रोक रहे हैं। सबका साथ, सबका विकास,

सबका विश्वास के आदर्श वाक्य को लागू करना चाहिए जो सामूहिक विश्वास और समावेशन के माध्यम से सभी भारतीयों का विकास चाहता है।

यह तभी संभव है जब सभी धर्मों के अनुयायी (साथ ही वे जो किसी भी धर्म का पालन नहीं करते हैं) एक धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक भारत में शांतिपूर्वक एक साथ रहें।

ए. फ़ैज़ुर्रहमान

इंजीनियर ए. फैज़ुर्रहमान चेन्नई स्थित एक स्वतंत्र शोधकर्ता हैं और "इस्लामिक फ़ोरम फ़ॉर दी प्रमोशन ऑफ़ मॉडरेट थॉट" के संस्थापक और महासचिव हैं। उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय से इस्लामियात में मास्टर्स की डिग्री प्राप्त की है।

✍ डॉ. वारिस मज़हरी

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" की
हदीस और उसका प्रमाण
एक आलोचनात्मक समीक्षा

कश्मीर के विवाद को लेकर पाकिस्तान के जिहादी संगठन लंबे समय से भारत के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़े हुए हैं। सक्रिय और आक्रामक होने के साथ-साथ यह एक व्यक्तिगत और छद्म युद्ध है जिसकी किसी भी परिस्थिति में इस्लाम में कोई जगह नहीं है। यह इस्लाम के सभी मूल सिद्धांतों के ख़िलाफ़ है। पाकिस्तान की मशहूर धार्मिक और शैक्षणिक संस्थाएँ इसे महज़ एक राजनीतिक लड़ाई मानती हैं। वे इसे इस्लामिक जिहाद के रूप में नहीं देखते। लेकिन पाकिस्तान के विभिन्न जिहादी संगठन जिन्हें देश के विद्वानों और स्कॉलर्स के एक समूह का बड़ा जन समर्थन प्राप्त है, दोनों देशों के बीच इस संघर्ष को जिहाद के रूप में देखते हैं। दरअसल,

पाकिस्तान और अरब देशों के कट्टरपंथी संगठन पूरी तरह से अतीत की औपनिवेशिक और वर्तमान राजशाही शक्तियों के राजनीतिक परित्याग से प्रभावित हैं। वे अपने राजनीतिक आधिपत्य का मुकाबला करने के लिए एक वैश्विक इस्लामी राजनीतिक आधिपत्य की कल्पना करते हैं, जो इस्लाम से पूरी तरह से अलग है। क़ुरआन में इस्लाम की सर्वोच्चता, इस्लाम की वैचारिक और आध्यात्मिक सर्वोच्चता को संदर्भित करती है, जैसा कि क़ुर्तुबी ने इसकी व्याख्या की है।

(अल-जामेउल-अहकामुल-क़ुरआन)

यही मूलतः *पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.)* का मिशन था जिसमें वह पूरी तरह से सफल रहे या फिर कोई यह कह सकता है जैसा कि एक अरब लेखक सुलेमान अल-बद्र ने दावा किया था कि (नऊज़ुबिल्लाह) अल्लाह के नबी (सल्ल.) धार्मिक स्तर पर सफल थे लेकिन ऐतिहासिक स्तर पर विफल रहे। (अरबी दैनिक अल-अंबिया, कुवैत, दिसंबर 9, 1996, संदर्भ: अरबी मासिक, अल बयान, लंदन, अप्रैल/मई 1997) इस्लाम के अनुयायियों द्वारा इस्लाम पर किए गए सबसे बड़े अत्याचारों में से एक यह है कि आज ग़ैर-मुस्लिमों के साथ होने वाली हर छोटी-बड़ी राष्ट्रीय और क्षेत्रीय लड़ाई और संघर्ष को जिहाद कहा जाता है। इससे पूरी दुनिया में इस्लाम को शर्मसार होना पड़ रहा है।

भारत और पाकिस्तान के बीच कश्मीर विवाद काफ़ी समय से चला आ रहा है और इसे सुलझाने के लिए कई स्तरों पर प्रयास भी किए गए हैं। इस संबंध में पाकिस्तान को मिली असफलताओं और निराशाओं के कारण वहां के जिहादी संगठनों के अलावा बड़ी संख्या में विद्वान और बुद्धिजीवी भी इसकी व्याख्या इस्लामिक जिहाद की लड़ाई के रूप में करने लगे। इससे भी अधिक कुछ प्रसिद्ध विद्वान इसे एक धार्मिक कर्तव्य घोषित करने का प्रयास कर रहे हैं। अब एक बड़ा जिहादी संगठन जो जानबूझकर जिहाद को लक्ष्य और साधन मानने की भूल करता है, अपने कश्मीर संबंधी तथाकथित जिहाद को पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) की हदीस मानने लगा है, जिसमें भारत पर आक्रमण की बात कही गई है। यह हदीस हज़रत अबू हुरैरा से नसाई में रिवायत है कि:

> *"अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने हमसे ग़ज़्वा-ए-हिंद का वादा किया। अगर मुझे इसमें भाग लेने का मौक़ा मिला तो मैं इसमें अपना जीवन और धन ख़र्च कर दूंगा। अगर मैं मारा गया, तो मैं सर्वश्रेष्ठ शहीदों में गिना जाऊंगा और अगर मैं लौट आया तो मैं एक आज़ाद अबू हुरैरा बनूंगा।"*
>
> ***(मुस्नद अहमद, हदीस: 7128)***

इस तरह की एक और रिवायत अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के द्वारा आज़ाद किए गए ग़ुलाम हज़रत सौबान से वर्णित है। उसके शब्द यह हैं:

मेरी उम्मत (पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) को मानने वाले) में दो समूह ऐसे होंगे जिन्हें अल्लाह ने आग से बचा लिया है। एक गिरोह भारत पर आक्रमण करेगा और दूसरा गिरोह वह है जो ईसा इब्न-ए-मरियम के साथ होगा।

(हदीस: 2575)

शब्दों की कमी या अत्यधिकता के साथ इस हदीस को नसाई के अलावा मुसनद अहमद बिन हंबल, बैहक़ी और तबरानी आदि में भी शामिल किया गया है। कश्मीर के मुद्दे पर इस हदीस का प्रयोग विभिन्न देशों में मुसलमानों और ग़ैर-मुस्लिमों के बीच चल रहे संघर्ष की तुलना में इसकी स्थिति को पूरी तरह अद्वितीय और विशिष्ट बनाता है। ऐसे में यह संभावना प्रबल रूप से बढ़ जाती है कि दुनिया के विभिन्न हिस्सों के व्यक्ति और समूह, भारत के साथ ग़ज़्वे की "महत्ता" को ध्यान में रखते हुए ख़ुद को शहीद करने के लिए उत्सुक हों, कश्मीर को अपनी आशाओं का केंद्र मानें। वास्तव में ऐसा ही महसूस होता है। ग़ज़्वतुल-हिंद को लेकर इंटरनेट पर विभिन्न वेबसाइटें इसी दृष्टिकोण का प्रचार-प्रसार करने में लगी हुई हैं। इस विषय पर लेख पाकिस्तान में प्रकाशित होते रहते हैं। हमारे सामने पाकिस्तान की सबसे प्रतिष्ठित उर्दू पत्रिका "मुहद्दिस" लाहौर का अगस्त 2003 अंक है। इसमें ग़ज़्वा-ए-हिंद पर 20 पेज का लेख शामिल है। लेखक का नाम डॉ. इस्मतुल्लाह है। इसमें कश्मीर के तथाकथित

जिहाद को इस हदीस के अनुरूप ढालने का भरपूर प्रयास किया गया है। इसी हदीस के तहत पाकिस्तान के कई तथाकथित जिहादी पूरे भारत के साथ जिहाद व युद्ध की बात करते हैं और मुमकिन है कि इसमें शामिल भी हैं, लेकिन "मुहद्दिस" ने उपर्युक्त ग्रंथ में इस दृष्टिकोण से स्पष्ट रूप से असहमति जताई है और उचित टिप्पणी में इसकी विद्वत्तापूर्ण आलोचना की है। यह चर्चा पाकिस्तान के धार्मिक और शैक्षिक पत्रों में नहीं दिखती। इससे पता चलता है कि वहां अधिकतर की राय इसके ख़िलाफ़ है। लेकिन इस संबंध में विचारणीय बात यह है कि वर्तमान जिहादी मनोदशा की संरचना ज्ञान और तर्कों के बारे में कम और वर्तमान राजनीतिक स्थिति से प्रभावित सोच और प्रतिक्रियाओं के मनोविज्ञान के बारे में अधिक है। पाकिस्तान सहित अरब और पश्चिम के सभी जिहादी आंदोलन इसी संदर्भ में आते हैं। यह हदीस उनके हाथों में एक खिलौना बनी हुई है और यह और भी अधिक बन सकती है। मासूम लोगों को इससे फाँसने का काम लिया जा रहा है। फ़िक्र की बात यह है कि इस हदीस के तहत जिहाद की अवधारणा क़यामत तक जारी रहती है। यह अत्यंत दुखद पहलू है। इस जिहाद का प्रभाव भारतीय मुसलमानों पर जिस तरह पड़ रहा है और पड़ सकता है वह बिल्कुल स्पष्ट है। इस दृष्टि से भारत और पाकिस्तान दोनों देशों के उलमा और बुद्धिजीवियों के लिए यह बड़ी फ़िक्र की बात है।

दुर्भाग्य से, जिहाद का सिद्धांत उन इस्लामी सिद्धांतों में से एक है जिससे सबसे अधिक नुक़सान हुआ है। इसकी शुरुआत इस्लाम की पहली सदी से हुई जब एक समूह ने मुसलमानों के

आपसी संघर्ष को जिहाद के नज़रिए से देखने की कोशिश की। बुख़ारी की कई रिवायतों में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर की आलोचना इस पर मौजूद है।

जिहाद और युद्ध की ग़लत व्याख्या की इस निरंतर परंपरा का परिणाम यह है कि दूसरों द्वारा किए गए हर अमानवीय और अनैतिक कार्य को अपने लिए वैध और धार्मिक उपलब्धि मान लिया गया, जिसका सबसे ख़राब उदाहरण आत्मघाती हमला है। इसके अलावा निजी स्तर पर जिहाद की अवधारणा भी इसका एक प्रमुख उदाहरण है।

इस हदीस से संबंधित चिंतन के कुछ महत्वपूर्ण पहलू निम्नलिखित हैं:

पहली बात तो यह है कि इस हदीस का ज़िक्र सिहा-ए-सित्ता में से सिर्फ़ नसाई में किया गया है, हालाँकि इस हदीस में ग़ज़वतुल-हिन्द की जो ख़ूबियाँ बयान की गई हैं उसके लिए ज़रूरी था कि यह सहाबा के बीच अधिक से अधिक लोकप्रिय हो और क़ुस्तुनतुनिया (तुर्की) की विजय की भविष्यवाणी की तरह इसका महत्व उससे भी अधिक हो। क़ुस्तुनतुनिया की विजय से संबंधित हदीसों को सहीहैन (हदीस की दो मशहूर किताबें) में स्पष्ट शब्दों में वर्णित किया गया है।

हज़रत अबू हुरैरा द्वारा रिवायत की गई हदीस को प्रसिद्ध हदीस स्कॉलर अल्लामा अल्बानी और कुछ अन्य शोधकर्ताओं ने ज़ईफ़ (वह हदीस जो सही न हो) घोषित किया है। मुसनद अहमद बिन हंबल में एक संबंधित हदीस को निम्नलिखित वाक्य के साथ वर्णित किया गया है कि: "सिंध और हिंद की तरफ़

लश्कर की रवानगी होगी।" इससे इस संदेह को बल मिलता है कि हो न हो, इस हदीस की रचना उमवी काल में इसी विशेष राजनीतिक उद्देश्य के लिए की गई होगी।

अगर ये हदीस सही है तो असल में इसकी भविष्यवाणी इस्लाम के शुरुआती दौर में ही पूरी हो चुकी है। अधिकांश विद्वान इस पर सहमत हैं और यह बात हमारे विवेक के अनुरूप है। हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि.) की ख़िलाफ़त 15 हिजरी के दौरान हज़रत हुक्म (रज़ि.) और हज़रत मुग़ैरा बिन अल-आस (रज़ि.) के माध्यम से थाना, भरूच आदि और उसके बाद हज़रत उस्मान (रज़ि.) और हज़रत अली (रज़ि.) के ख़िलाफ़त के दौरान सहाबा किराम ने सिंध और गुजरात के विभिन्न शहरों से भारत में प्रवेश किया और धार्मिक और राजनीतिक स्तर पर इस्लाम को पेश करने और फैलाने का प्रयास किया।

हदीस के कुछ विद्वानों के अनुसार, यह 711 ईस्वी में मुहम्मद बिन क़ासिम द्वारा सिंध पर आक्रमण को संदर्भित करता है जो भारत में बड़े पैमाने पर इस्लाम के प्रसार और सुदृढ़ीकरण का स्रोत बन गया। यदि हदीस प्रामाणिक है तो यह घटना हदीस का निकटतम उदाहरण प्रतीत होती है। मुहद्दिस के उक्त लेख में संस्था की तरफ़ से आलोचनात्मक टिप्पणी में इसे ही प्राथमिकता दी गई है।

यह हदीस स्पष्ट रूप से एक विशिष्ट घटना (ग़ज़्वा) को संदर्भित करती है, न कि घटनाओं के अनुक्रम (ग़ज़्वात) को, जैसा कि उपर्युक्त लेख में साबित करने की कोशिश की गई है। कुछ

अन्य विद्वानों का भी यह विचार है जो हदीस के शब्दों और विषय-वस्तु के बिल्कुल विपरीत है।

यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है कि भारतीय उपमहाद्वीप पर मुस्लिम शासकों द्वारा अनगिनत और निरंतर युद्ध के बावजूद लगभग 600 वर्षों तक मुसलमानों के शासन और उसकी आधी आबादी के मुसलमान होने के बावजूद क्या इस बात की गुंजाइश बाक़ी रह जाती है कि इसको जिहाद और युद्ध का लक्ष्य घोषित किया जाए? भारतीय उपमहाद्वीप में अब दो मुस्लिम देश अस्तित्व में आ गए हैं। वर्तमान भारत में इस्लाम के शांतिपूर्ण निमंत्रण के सभी साधन और संभावनाएँ मौजूद हैं। यह पहलू इस तथ्य से अलग है कि दोनों देश आपसी सहयोग समझौतों से बंधे हैं और विद्वानों की सर्वसम्मत राय के अनुसार आज पूरा विश्व एक व्यावहारिक समझौते के तहत जी रहा है। ऐसी स्थिति में, कश्मीर की तथाकथित आज़ादी के नाम पर छेड़ा गया 'छद्म' युद्ध दूसरे पक्ष के साथ धोखाधड़ी और इस्लाम के सिद्धांतों के ख़िलाफ़ विद्रोह के अलावा और कुछ नहीं है।

महमूद गज़नवी, शहाबुद्दीन ग़ौरी, अमीर तैमूर, नादिर शाह आदि मुस्लिम शासकों के लिए इस हदीस को भारत पर अपने आक्रमण के औचित्य के रूप में प्रस्तुत करना बहुत आसान था। यह बात उनके दरबारी विद्वान उन्हें समझा सकते थे लेकिन भारतीय इतिहास पर लिखी किताबों में उनके हालात में यह बात नहीं मिलती। शाह वलीउल्लाह (रह.) ने मराठों की ताक़त को तोड़ने के लिए अहमद शाह अब्दाली को भारत पर आक्रमण

करने के लिए आमंत्रित किया, लेकिन उन्होंने इस हदीस को प्रमाण नहीं बनाया।

भविष्यवाणियों के संबंध में यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि उनकी भाषा अप्रत्यक्ष और प्रतीकात्मक होती है। इसके सही अर्थ और उद्देश्य तक पहुँचना आसान नहीं है। इसके लिए बहुत अधिक व्याख्या और अनुमान की आवश्यकता होती है, इसलिए उनकी व्याख्या केवल संभावनाओं और अनुमान के स्तर पर ही मुमकिन है।

बहरहाल, ग़ज़्वतुल-हिंद से संबंधित हदीस को कश्मीर के तथाकथित जिहाद और भारत-पाक टकराव पर पेश करना एक अंधा और दुखद दुस्साहस है। यह स्पष्ट रूप से अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के साथ उनके तथाकथित अनुयायियों द्वारा किया गया अन्याय है। भारतीय उपमहाद्वीप और पाकिस्तान के जिहादी आंदोलन अपनी सोच और व्यवहार में ख़्वारिज के समान हैं, जिनके बारे में पैगंबर मुहम्मद (सल्ल.) ने स्पष्ट रूप से कहा था कि वे इस्लाम से उसी तरह निकल जाएंगे जैसे धनुष से तीर निकलता है। उनकी तरह, जैसा कि हज़रत अली ने उनके बारे में कहा था, वे सही शब्द से ग़लत अर्थ निकालते हैं।

पढ़े लिखे लोगों विशेष रूप से उलमा के वर्ग को इस्लामी ग्रंथों के साथ इस खिलवाड़ और इस्लाम के पुनरुद्धार के नाम पर इस्लाम को नष्ट करने के प्रयास पर गंभीरता से ध्यान देने की सख़्त ज़रूरत है। इस्लाम में देशद्रोह को ख़त्म करने के लिए जिहाद बताया गया था, लेकिन वर्तमान में देशद्रोह फैलाने के लिए जिहाद किया जा रहा है। लोगों को इस पहलू के ख़तरों और इसके

परिणामों के बारे में जागरूक करने की ज़रूरत है। इस संबंध में भारत और पाकिस्तान के उलमा की ज़िम्मेदारी विशेष रूप से बढ़ जाती है। जहां मुस्लिम हलक़ों द्वारा आतंकवाद के आरोपों का बचाव करने के लिए आए दिन सेमिनार और सम्मेलन आयोजित किए जाते हैं, वहीं ऐसे शैक्षणिक कार्यक्रमों के आयोजन की भी ज़रूरत है जिसके द्वारा इस्लाम के नाम पर हो रहे फ़साद की कार्रवाईयों की समीक्षा की जा सके।

इस्लामिक जिहाद की पारंपरिक अवधारणाओं को संशोधित करने की सख़्त ज़रूरत है। सक्रिय जिहाद की अवधारणा पूरी तरह से ग़लत है और इस विषय पर अल्लामा यूसुफ़ क़रज़ावी की महत्वपूर्ण पुस्तक: "फ़िक़्ह अल-जिहाद" ने इस तथ्य को निर्विवाद सबूतों के साथ स्पष्ट कर दिया है। जब तक इस्लाम के राजनीतिक चिंतन में पाए जाने वाले अंतरालों और विरोधाभासों को सैद्धांतिक स्तर पर दूर नहीं किया जाता, तब तक आज के लोकतांत्रिक और संयुक्त समाज के साथ इसका टकराव ख़त्म नहीं हो सकता। ऐसी आशंका है कि मुसलमानों के बीच एक गंभीर सामूहिक नैतिक संकट पैदा हो जाएगा। केवल शाब्दिक स्तर पर आरोपों का बचाव करना और सरल और सामान्य तरीक़े से आतंकवाद की निंदा करना पर्याप्त नहीं है।

डॉ. वारिस मज़हरी

लेखक और इस्लामिक विद्वान डॉ. वारिस मज़हरी ने दारुल उलूम देवबंद से स्नातक और पीएचडी जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली से की है। वर्तमान में इस्लामी अध्ययन विभाग, हमदर्द विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में सीनियर असिस्टैण्ट प्रोफ़ेसर हैं।

‘ग़ज़्वा-ए-हिंद’ से संबंधित रिवायतें

पवित्र क़ुरआन के परिप्रेक्ष्य में

“ग़ज़्वा-ए-हिंद” से संबंधित दो रिवायतएं मौजूद हैं। इन दोनों रिवायात को रसूलुल्लाह (सल्ल.) से जोड़ना संदेहास्पद है।

किसी भी रिवायत को जाँचने के अन्य तकनीकी मानदंडों के अलावा एक सरल मापदंड यह है कि क्या वह रिवायत पवित्र क़ुरआन और उसके बौद्धिक और नैतिक ढांचे के अनुकूल है या नहीं। यदि नहीं, तो यह अल्लाह के रसूल (सल्ल.) का कथन नहीं हो सकता है। ज़ाहिर है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ऐसा कुछ भी नहीं कह सकते जो पवित्र क़ुरआन की मूल शिक्षाओं के विरुद्ध हो।

“ग़ज़्वा-ए-हिंद” से संबंधित सामान्यतः दो रिवायतएँ प्रचलित हैं। इन दोनों रिवायतों के साथ एक मुश्किल तो वह है जिसे हम रिवायत के मूल्यांकन का तकनीकी मानक कहते हैं। यह

स्पष्ट है कि ये रिवायतएं हदीस के प्रचलित सत्यापन के मानकों को पूरा नहीं करती हैं। इसी कारण से उलमा ने इन रिवायतों को कभी भी प्रामाणिक हदीस का दर्जा नहीं दिया है। मौलाना मुहम्मद ज़कवान नदवी और डॉ. वारिस मज़हरी ने इसी पुस्तिका में इस विषय पर विस्तार से लिखा है। इन रिवायतों के साथ दूसरी बड़ी समस्या यह है कि ये रिवायतएँ न केवल युद्ध की पवित्र क़ुरआन की अवधारणा के पूरी तरह से विरोधाभासी हैं। जिहाद से संबंधित सभी आयतों के गहन अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि पवित्र क़ुरआन के अनुसार युद्ध केवल रक्षात्मक है। पवित्र क़ुरआन में ऐसे युद्ध की कोई अवधारणा नहीं है जिसे कार्रवाई कहा जा सके। इसके विपरीत ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित रिवायतें भारत के ख़िलाफ़ युद्ध को एक पवित्र कर्तव्य घोषित करती हैं हालाँकि पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) के समय में भारत में मुसलमानों पर न तो कभी अत्याचार अत्याचार हुआ और न भारत के किसी शासक ने कभी इस्लाम के विरुद्ध युद्ध छेड़ा था। स्पष्ट है कि इन परिस्थितियों में पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) भारत के विरुद्ध युद्ध को कैसे प्रोत्साहित कर सकते थे? इन सभी बातों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जो रिवायतएँ ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हैं वह पूरी तरह से काल्पनिक है। रसूलुल्लाह (सल्ल.) ने कभी भी भारत के ख़िलाफ़ युद्ध या ग़ज़्वा-ए-हिंद को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। जो लोग भारत के ख़िलाफ़ अपने नापाक युद्ध को जारी रखने के लिए इन रिवायतों का उपयोग करते हैं, वे वास्तव में अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के नाम से मनगढ़ंत बातें बता रहे हैं। ऐसे लोग इस्लाम के दुश्मन हैं। अब यह उलमा का कर्तव्य है कि वह इस्लाम के ऐसे दुश्मनों को बेनक़ाब करें।
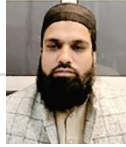
मुफ़्ती मुहम्मद अतहर शम्सी

मुफ़्ती अतहर शम्सी मदरसा मज़ाहिर उलूम, सहारनपुर से स्नातक आलिम हैं और अल-क़ुरआन अकादमी कैराना, जिला शामली (यूपी) के संस्थापक निदेशक के रूप में कार्यरत हैं जो पवित्र क़ुरआन के वैज्ञानिक और सामाजिक विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का काम कर रहे हैं।

✍ **मौलाना कल्बे रुशैद रिज़वी**

“ग़ज़्वा-ए-हिंद” के नज़रिये को रद्द करें

कुछ शिकायत उनसे है जो बोलते हैं, कुछ शिकायत उनसे है जो सुनते हैं, कुछ शिकायत उनसे है जो सुनने सुनाने के बीच बातों को रिकॉर्ड करते हैं, और उनका ग़लत अर्थ निकालते हैं और फिर वह अर्थ नकारात्मकता में बदल जाता है और फिर वह ग़लत मतलब नई पीढ़ी तक पहुँच जाता है, फिर आप उस लगी हुई आग को जिस तरह भी बुझाना चाहें, नहीं बुझा सकते जब तक कि आप खुले तौर पर सीधे और सरल शब्दों में इसका खंडन न कर दें।

चाहे वह आपकी सिहा-ए-सित्ता में लिखा हो या हमारी चार किताबों में लिखा हो या आपका और मेरा शोध क्या है, इन लोगों को इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि वे कितनी बातचीत कर

रहे हैं। हिंदुओं की दिमाग़ में यह बात बैठ गई है कि मुसलमान हमारे विरुद्ध युद्ध की तैयारी कर रहे हैं। उनका लक्ष्य हमें मिटा देना है। इसलिए सावधानी का तक़ाज़ा यह है कि इससे पहले कि वे हमें मारें काटें, हम कार्रवाई करके उन्हें ही नष्ट कर दें। हदीसों की किताबों में कई ऐसी हदीसे हैं जिन्हें हदीसों की जगह हदीसों के नाम से बैठा दिया गया है। ग़ज़्वा-ए-हिंद वाली रिवायत भी उनमें से एक है। मैं ऐसे किसी भी वाक्य या ऐसी किसी बात पर यक़ीन नहीं कर सकता जिसमें किसी को मारने या किसी को मारने का मंसूबा बनाने की गंध आती हो।

एक विशेष बात हमारे हिंदू भाईयों के लिए जो भारतीय टेलीविज़न चैनलों पर बड़े-बड़े एंकर हैं, उन्होंने इस हदीस का कितना फ़ायदा उठाया है, यह समझाने के लिए कि भगवान न करे कि इस्लाम नफरत फैलाने वाली बातें फैलाता है, जबकि आप बेहतर जानते हैं हम लोगों की ज़िंदगी में प्यार भरा है। आज जब भी हम किसी हिंदू भाई से बात करते हैं तो ख़ुदा जानता है कि ये सभी उलमा पाखंडी बातें नहीं करते। वे सभी विश्वास के साथ बोलते हैं कि यह मेरा भाई है, मेरा पड़ोसी है, मेरी भाषा है, मेरा देशवासी है, इसके अलावा हमारे मन में कुछ नहीं रहता। आज टेलीविज़न की बहसों से यह नुक़सान हुआ है कि भारतीय टेलीविज़न पर जिन मौलवियों को बुलाया जाता है, जब उनके सामने गज़्वा-ए-हिंद की हदीस पढ़ी जाती है, तो एक भी मौलवी इससे इनकार नहीं करता, चुप रहता है। अरे भाई, इनकार कर दो। जैसा कि आप कहते हैं, ऐसी कोई हदीस नहीं है। हम गज़्वा-ए-हिंद की हदीस को बिल्कुल स्वीकार नहीं करते हैं। खुले तौर पर

घोषणा करें कि मैं अपनी ओर से, इन उलमा की ओर से और भारत के मुसलमानों की ओर से इसकी निंदा करता हूं। इस हदीस का मीडिया में ग़लत इस्तेमाल किया गया है और हम आपको बताना चाहते हैं कि हमारे पास ऐसी कोई हदीस नहीं है और हम न तो इस पर विश्वास करते हैं, न ही रावी और न ही रिवायत पर। मैं सभी उलमा से अनुरोध करूंगा कि जब भी ऐसे किसी विषय पर चर्चा हो तो टेलीविज़न चैनल पर चर्चा में भाग लेने से पहले अच्छी तरह तैयारी कर लें क्योंकि आपका भाषण रिकॉर्ड करके हिंदुओं को बताया जाएगा। इस्लाम के बारे में मैं जो जानता हूं, उसके आलोक में मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि इस्लाम भारत के ख़िलाफ़ किसी भी सक्रिय युद्ध की घोषणा नहीं करता है। मैं मुहम्मद बिन क़ासिम के हमले को इस्लामी हमला नहीं मानता। मैं पुनः निवेदन करता हूं कि आने वाले समय में उन सभी उलमा, सभी लेखकों और उन सभी को जो अपनी शिक्षाओं और उपदेशों से जनता में कुछ लोगों को प्रभावित करते हैं और विशेष रूप से उन लोगों को जिनकी बात हिंदू भाई थोड़ा बहुत सुनते हैं और पसंद करते हैं। उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे अस्पष्ट बात न करें। उनकी ग़लतफ़हमी को दूर करने की यथासंभव कोशिश करें यह बहुत ज़रूरी है।

मौलाना कल्बे रुशैद रिज़वी

मौलाना डॉ. कल्बे रुशैद रिज़वी, मशहूर शिया विद्वान, प्रसिद्ध वक्ता, समाज सुधारक और राष्ट्रीय उलमा पार्लियामेंट के महासचिव हैं।

✍ अब्दुल मोईद अज़हरी

'ग़ज़्वा-ए-हिंद' की प्रतीक्षा कौन कर रहा है?

जब भी भारत और पाकिस्तान के बीच किसी तरह का राजनीतिक टकराव होता है तो आम मुसलमानों को जबरन बहस में घसीट लिया जाता है। इस चर्चा का नाम है ग़ज़्वा-ए-हिंद। इस दावे का इस्तेमाल पिछले कई सालों से आम मुसलमानों को उनकी मूलभूत ज़रूरतों यानी शिक्षा, राजनीतिक और आर्थिक स्थिरता, व्यापारिक साझेदारी आदि से ध्यान भटकाने के लिए किया जाता रहा है, जिसकी पहल अक्सर पाकिस्तान से होती है। ग़ज़्वा-ए-हिंद का जो मतलब बयान किया जाता है वह यह है कि: "अब पाकिस्तान की ओर से भारत पर युद्ध होगा जिसमें पाकिस्तान जीतेगा और इस युद्ध की ख़ुशख़बरी पैग़म्बरे इस्लाम (सल्ल.) ने दी है।" यह जबरन थोपी गई बहस है जिसमें आम मुसलमान को उलझा कर रख दिया जाता है। किसी भी अन्य आतंकवादी संगठन की तरह यहां भी मुसलमानों को उपदेश दिया जा रहा है कि जो भी इस युद्ध में भाग लेगा वह भाग्यशाली होगा और जन्नत में जाएगा। पिछली एक शताब्दी से सियासी

मुसलमानों ने मज़हबी और दीनी मुसलमानों को इसी तरह की जबरन और व्यक्तिगत व्याख्याओं में भ्रमित कर रखा है।

सबसे पहले ग़ज़्वा-ए-हिंद की रिवायत के बारे में यह जानना ज़रूरी है कि अब तक पाकिस्तान के कुछ उलमा को छोड़कर किसी ने भी इसके बारे में बात नहीं की है। भारत समेत दुनिया के अन्य मुस्लिम देशों में इस रिवायत का कोई ख़ास ज़िक्र नहीं मिलता। इससे भी अधिक विचारणीय बात यह भी है कि जिस रिवायत में धर्म प्रचार का उल्लेख है उसमें पाकिस्तान का अस्तित्व कहां है? भारत और चीन का उल्लेख मिलता है और नबी (सल्ल.) के काल में उनके अस्तित्व के प्रमाण भी मिलते हैं, लेकिन पाकिस्तान स्वयं उस समय भारत का ही हिस्सा था। पाकिस्तान के कुछ विद्वानों ने इसे कैसे अपनी सेना मान लिया है, यह गंभीरता से विचारणीय है। उस समय भारत में बर्मा, अफ़ग़ानिस्तान, बांग्लादेश शामिल थे और कुछ रिवायतों के अनुसार नेपाल भी इसका हिस्सा था। वर्णित रिवायत में यह उल्लेख है कि सेना सिंध से होकर गुज़रेगी। अब सिंध से गुज़रने वाली सेना पाकिस्तान की होगी, इसका कहीं भी उल्लेख नहीं है।

यहां यह बताना भी ज़रूरी है कि ग़ज़्वा-ए-हिंद का समर्थन करने वाले ज़्यादातर लोग एक ख़ास विचारधारा के हैं। उनके नज़रिए से साफ़ है कि वे पाकिस्तान को युद्ध में उलझाना चाहते हैं। वे नहीं चाहते कि पाकिस्तान अन्य देशों की तरह शांति का रास्ता अपनाए और दूसरे विकसित या विकासशील देशों की तरह देश और राष्ट्र का विकास करे और यहां से अविश्वास और शिर्क के निशान मिट जाएं। इन लोगों ने हिंदुस्तान-पाकिस्तान में

यह बीड़ा उठाया है कि उन्हें ख़ुदा की हुकूमत क़ायम करनी है और यहां से कुफ़्र और शिर्क की निशानियां मिटानी हैं। जबकि उन्हीं व्यक्तियों के सामने आपस में क्रूरता और पाखंड की गहरी और ख़ूनी परंपराएं मौजूद हैं।

एक पहलू यह भी है कि इस रिवायत में अन्य लक्षण भी वर्णित हैं। ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित सभी रिवायतों में कहीं भी पाकिस्तान का उल्लेख नहीं है। दूसरा अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू यह है कि ग़ज़्वा-ए-हिंद कोई आने वाला युद्ध नहीं है बल्कि वह हो गया है और यह किसी देश का दूसरे देश को जीतने का युद्ध नहीं है, बल्कि कुछ उत्पीड़ित लोगों की सुरक्षा में एक अत्याचारी के विरुद्ध युद्ध है।

यह वही लड़ाई है जिसका श्रेय मुहम्मद बिन क़ासिम को दिया जाता है। इस तारीख़ की रिवायत में भी जिस जंग का ज़िक्र है उसका उद्देश्य इस्लाम का प्रचार-प्रसार नहीं था, न ही मुस्लिम सेना द्वारा ग़ैर-मुसलमानों पर हमला करने का मामला था। इतिहास के मुताबिक़, भारत के एक राजा ने यहां कुछ ग़ैर-मुस्लिम महिलाओं को क़ैद कर लिया था। इनमें से कुछ महिलाओं ने मुहम्मद बिन क़ासिम के बारे में सुना था कि वह मज़लूमों की पुकार सुनता है। इसलिए इन क़ैद महिलाओं ने अपनी मदद के लिए मुहम्मद बिन क़ासिम, जो उस समय एक मुस्लिम कमांडर था, को एक पत्र भेजा। पत्र मिलते ही वह इन महिलाओं को इस राजा के चंगुल से बचाने के लिए अपने कुछ साथियों के साथ आया था। इस लड़ाई को कुछ लोगों ने ग़ज़्वा-ए-हिंद के रूप में वर्णित किया है।

आम भारतीय मुसलमानों की पहली लड़ाई अपने ही राजनीतिक नेतृत्व से है, जिन्होंने हर युग में उनका सियासी सौदा किया है और बदले में अपने हित साधे हैं। दूसरी लड़ाई धार्मिक नेतृत्व से भी है, जिन्होंने मुसलमानों को इतने टुकड़ों में बांट दिया है कि पूरी दुनिया को एकता का सूत्र देने वाली मुस्लिम क़ौम आज दुनिया की सबसे बिखरी क़ौम बन गयी है। हमारे सूफ़ियों ने जो रास्ते अपनाए, जो तरीक़े बताए और जिस तरह सह-अस्तित्व के लिए उन्होंने गहन प्रयास किए हैं, हमें उन्हीं परंपराओं को अपनाना होगा। हमें अराजकता और नफ़रत की सोच को त्यागना होगा। इसके बजाय इसे मानवता से जोड़कर देखा जाना चाहिए। ज़ालिम केवल ज़ालिम होता है। उसका कोई धर्म नहीं होता। उसके कपड़े कुछ भी हो सकते हैं, उसकी भाषा और जगह कुछ भी हो सकती है। भाषा, घर और पहनावे से ज़ुल्म तय करना इस वक़्त का सबसे बड़ा ज़ुल्म है। मैं यहां बताना चाहूंगा कि मैंने क़ाहिरा के विश्व प्रसिद्ध धार्मिक मदरसे जामिया अज़हर में पढ़ाई की है। जामिया अज़हर में अपने प्रवास के दौरान मैंने अपने शिक्षकों, सहपाठियों या किसी अरब और मिस्र के विद्वानों से ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस के समर्थन में कभी नहीं सुना। वे लोग निश्चित रूप से यह नहीं मानते कि इस्लामी शिक्षाओं में ग़ज़्वा-ए-हिंद जैसा कोई युद्ध भविष्य में होने वाला है।

अब्दुल मोईद अज़हरी

अब्दुल मोईद अज़हरी एक इस्लामी विद्वान और कई हिंदी, उर्दू समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के स्तंभकार हैं। वह विश्व प्रसिद्ध इस्लामिक विश्वविद्यालय, अल-अज़हर, क़ाहिरा, मिस्र से स्नातक हैं और 'नया सवेरा' न्यूज़ पोर्टल के चीफ़ एडिटर हैं।

डॉ रुचिका अरोड़ा

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" एक ग़लत नज़रिया

मैंने "ग़ज़्वा-ए-हिंद" शब्द पहली बार ओटीटी प्लेटफ़ॉर्म नेटफ़्लिक्स के माध्यम से 'सेक्रेड गेम्स' नामक भारतीय वेब सिरीज़ में सुना। ग़ज़्वा-ए-हिंद सिद्धांत को सेक्रेड गेम्स, सीज़न दो में एक प्रमुख कथानक बिंदु के रूप में इस्तेमाल किया गया था, जहां कहानी शाहिद ख़ान नाम के एक पाकिस्तानी के इर्द-गिर्द घूमती है, जिसने ग़ज़्वा-ए-हिंद का नेतृत्व करने के लिए अपना ख़ुद का आतंकवादी सेल बनाया था। इससे मेरी जिज्ञासा बढ़ी और मैंने इस पर शोध करना शुरू कर दिया।

शोध के दौरान कई सवाल उठे, ख़ास तौर पर जब मैं हिंदू पृष्ठभूमि से आती हूं, और तीन अलग-अलग महाद्वीपों-उत्तरी अमेरिका, यूरोप और भारत में रह चुकी हूं, जैसे: क्या मैंने पहले कभी इस शब्द को सुना है? क्या मैं इस विचार से डरती हूँ? क्या मुझे डरना चाहिए, क्योंकि मैं वर्तमान में भारत में हिंदू धार्मिक मूल्यों के साथ रहती हूं? इनमें से कोई भी सवाल जमीनी हक़ीक़त पर खरा नहीं उतरता.

इस्लामी वास्तुकला, कला और संस्कृति के क्षेत्र में एक रिसर्च स्कॉलर की हैसियत से और आग़ा ख़ान ट्रस्ट जैसे संगठनों से जुड़ी रही हूँ, जो मुख्य रूप से दिल्ली, आगरा और कश्मीर में मुस्लिम संस्कृतियों पर शोध कर रहे हैं, मुझे कभी कोई समस्या नहीं हुई।

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" क्या है?

"ग़ज़्वा" एक अरबी शब्द है जिसका अर्थ है कुछ हासिल करना या किसी मिशन को अंजाम देना। इस्लामी धार्मिक साहित्य में यह उन अभियानों और युद्धों से जुड़ा था जो पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) ने व्यक्तिगत रूप से लड़े थे, जो सभी रक्षात्मक प्रकृति के थे जिन्हें आमतौर पर ग़ज़्वा के नाम से जाना जाता था।

हदीसें क्या कहती हैं?

हदीस संकलनों में इसके संदर्भ हैं, हालांकि कई उलमा ने इसे प्रामाणिक नहीं माना है। हदीसों में ग़ज़्वा-ए-हिंद की भविष्यवाणी की गई है। क्या ये हदीसें सही हैं? यदि हाँ, तो उन्हें आज के सन्दर्भ में कैसे समझा जा सकता है?

सिहा-ए-सित्ता के नाम से जाने जाने वाले हदीसों के संकलनों को प्रामाणिक माना जाता है और विद्वानों की सर्वसम्मति से ही इन्हें प्रामाणिक माना गया है। शोध से पता चलता है कि सिहा-ए-सित्ता का एकमात्र संग्रह जिसमें ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसों के अंश शामिल हैं, प्रामाणिकता के मामले में छह खंडों में से पांचवें स्थान पर है।

हदीस के इस खंड में ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित केवल तीन हदीसें हैं, जिनमें से दो को कमज़ोर और एक को प्रामाणिक बताया गया है। ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित किसी भी हदीस को प्रामाणिक घोषित नहीं किया गया है।

ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसें केवल नसाई में ही उपलब्ध हैं। हालाँकि, अगर इस रिवायत को विश्वसनीय माना जाए तो भी यह स्पष्ट होना चाहिए कि इसमें हिंसा और लड़ाई का उल्लेख नहीं किया गया है। यह केवल भारत में एक मिशन शुरू करने वाले एक समूह के बारे में बात करता है जिसे जहन्नम की आग से छुटकारा दिया जाएगा।

इसकी ग़लत व्याख्या कैसे की जा सकती है?

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" एक झूठी कहानी के अलावा और कुछ नहीं है, और कुछ मुस्लिम चरमपंथियों द्वारा इस्लामी साहित्य में भारत को जीतने के लिए मुसलमानों द्वारा कथित सैन्य युद्ध का उल्लेख करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द है। कुछ चरमपंथी समूहों ने भारत के ख़िलाफ़ आतंकवादी कृत्यों को उचित ठहराने के लिए इस शब्द का इस्तेमाल किया है, और इसे नफ़रत फैलाने और हिंसा भड़काने के लिए एक हथियार माना जाता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि इस अवधारणा का मुख्यधारा के इस्लामी धर्मशास्त्र या इतिहास में कोई आधार नहीं है।

इसके अस्तित्व का दावा करने के लिए कोई ठोस संदर्भ या सबूत नहीं है, ये व्याख्याएं केवल ऐतिहासिक घटनाओं से लिए गए विचार हैं जो राजनीतिक एजेंडा बनाने के लिए समय के संदर्भ को नज़रअंदाज़ करते हैं।

यह शब्द कब अस्तित्व में आया?

इसका उपयोग पाकिस्तान के कुछ चरमपंथी उलमा जैसे डॉ. इसरार अहमद द्वारा विशेष रूप से युवा पीढ़ी के लिए 'परलोक' के लिए एक हथियार के रूप में किया गया है, जो उनके वर्तमान जीवन को बर्बाद करने के अलावा कुछ नहीं हो सकता।

लेकिन क्या यह सचमुच सिर्फ भारत के बारे में है?

विभिन्न शोधकर्ताओं और उल्मा ने "ग़ज़्वा-ए-हिंद" शब्द में 'हिन्द' को हिंदुस्तान के रूप में परिभाषित किया है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि इस शब्द को समझते समय इसके संदर्भ को ध्यान में रखाना ज़रूरी है।

हिंदुस्तान फ़ारसी शब्द हिंदू से बना है, जो संस्कृत शब्द सिंधु (सात नदियों की भूमि) से लिया गया है। कुछ भाषाई कारणों से यह शब्द बदलकर "हिंद" हो गया। ज्ञात हो कि उस समय "हिंद" पूरे उपमहाद्वीप को कवर करता था, जिसमें वर्तमान अफ़ग़ानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, भारत, मालदीव, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका आदि शामिल थे। ध्यान देने वाली बात यह है कि हिंद आज का हिंदुस्तान नहीं है, इसलिए जब हम ग़ज़्वा-ए-हिंद की बात करते हैं तो हम संपूर्ण उपमहाद्वीप की बात कर रहे होते हैं।

क्या "ग़ज़्वा-ए-हिंद" हिंदुस्तान पर हमला है? नहीं

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" की अवधारणा की व्याख्या आमतौर पर मुस्लिम उलमा और इस्लामोफ़ोबिया के समर्थकों द्वारा पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) द्वारा भारत पर सैन्य आक्रमण के रूप में की

जाती है। इस शब्द का प्रयोग अक्सर उन चरमपंथी समूहों द्वारा एक औचित्य के रूप में किया जाता है जो हिंसा भड़काना और अपनी विचारधारा को बढ़ावा देना चाहते हैं। कुछ चरमपंथी समूहों ने भारत के ख़िलाफ़ आतंकवादी कृत्यों को उचित ठहराने के लिए इस शब्द का इस्तेमाल किया है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि इस अवधारणा का मुख्यधारा के इस्लामी धर्मशास्त्र या इतिहास में कोई आधार नहीं है। हालाँकि यह अवधारणा सैकड़ों वर्षों से चली आ रही है।

इस दास्तान को कौन आगे बढ़ा रहा है?

भारत की मज़बूत वैश्विक उपस्थिति और पाकिस्तान की आर्थिक रूप से कमज़ोर स्थिति को देखते हुए पाकिस्तान भारत पर हमला करने के लिए धार्मिक दृष्टिकोण से कुछ तत्वों का उपयोग कर रहा है। पाकिस्तान किसी भी सूरत में भारत को चुनौती देने में असमर्थ है और परिणामस्वरूप वे ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा का उपयोग करके इस विचारधारा का प्रचार करने के लिए कुछ पाकिस्तानी चरमपंथियों का सहारा ले रहे हैं।

हम कहाँ जा रहे हैं?

एक ग़ैर-मुस्लिम की हैसियत से ब्रिटेन में पश्चिमी परवरिश पाकर वर्तमान में भारत में रह रही हूँ। यक़ीन मानिए, इस विचार से मैं कभी नहीं डरी और न ही किसी तरह का ख़तरा महसूस हुआ। मेरे सहकर्मी ज्यादातर मुस्लिम हैं, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि ज़मीनी हक़ीक़त समाचार चैनलों को देखकर जो समझ में आती है, उससे बहुत अलग है।

हालाँकि, इंग्लैंड में अपने प्रवास के दौरान मैंने देखा कि अमेरिका में 9/11 के आतंकवादी हमलों, मार्च 2004 में मैड्रिड में बम विस्फोट और जुलाई 2005 में लंदन में बम विस्फोटों के बाद पश्चिम में रहने वाले मुसलमानों के प्रति शत्रुता बढ़ गई। 9/11 के हमलों के तुरंत बाद मुसलमानों के ख़िलाफ़ अपराध बढ़ गए। जिस किसी को भी मुस्लिम माना जाता था, चाहे वह मूल रूप से मुस्लिम, सिख, दक्षिण एशियाई या अरब हो, आतंकवाद के चेहरे से जोड़ दिया जाता। इस अनुचित रवैये ने इन समुदायों को पश्चिमी दुनिया का दुश्मन बताकर उनमें भय पैदा कर दिया है।

दुर्भाग्य से, "ग़ज़्वा-ए-हिंद" एक ग़लत नज़रिये ने भारतीय मुसलमानों के लिए किसी भी अन्य धर्म की तुलना में अधिक समस्याएं पैदा कीं। ग़ज़्वा-ए-हिंद से इस्लाम के सच्चे मानवीय मूल्यों और वफ़ादार भारतीय मुसलमानों तथा भारत के प्रति उनकी देशभक्ति को ख़तरे में डाल दिया है।

मैं स्वाभाविक रूप से एक संवेदनशील व्यक्ति हूं। इसलिए मैंने ग़ज़्वा-ए-हिंद के बारे में और अधिक जानने के लिए गहन शोध किया और मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा धीरे-धीरे ख़त्म हो रही है और अब मुसलमानों में इसकी कोई मज़बूत उपस्थिति नहीं है। 1990 के दशक में भारत में यह जिस तीव्रता से प्रचलित था, अब उसमें काफ़ी गिरावट आ चुकी है।

डॉ. रुचिका अरोड़ा

डॉ. रुचिका अरोड़ा ने इंग्लैंड से इस्लामिक आर्किटेक्चर में पीएचडी की उपाधि प्राप्त की है। उन्होंने अपना अधिकांश जीवन भारत और इंग्लैंड में बिताया है। भारत में प्रवास के दौरान इस्लामिक आर्ट्स और आर्किटेक्चर में उनकी दिलचस्पी और बढ़ गई है।

डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान

हिंदुस्तान में 'ग़ज़्वा-ए-हिंद' का प्रोपेगेण्डा

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" क्या है?

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" का तात्पर्य पाकिस्तान के जिहादी संगठनों की नज़र में भारत पर अंतिम विजय से है। यह इस विचार को बढ़ावा देता है कि कुछ हदीसों में यह भविष्यवाणी है कि एक इस्लामी सेना भारत और पाकिस्तान उपमहाद्वीप पर हमला करेगी और उसे जीत लेगी। पाकिस्तानी चरमपंथी समूह लश्कर-ए-तैयबा ने ग़ज़्वा-ए-हिंद की "भविष्यवाणी" को एक ऐसे परिदृश्य के रूप में ग़लत व्याख्या किया है जहां मुस्लिम ताक़तें भारत पर हावी हो जाएंगी और भारत को एक इस्लामी राज्य में बदल देंगी, जो पूरी तरह से झूठा प्रोपेगेण्डा और बुनियादी इस्लामी शिक्षाओं के ख़िलाफ़ है।

वास्तव में, ग़ज़्वा-ए-हिंद वाली हदीस बहुत ज़ईफ़ है, जिसका उल्लेख केवल सुनन-नसाई और मुसनद अहमद इब्न-ए-हंबल में किया गया है, जबकि सहीह बुख़ारी, सहीह मुस्लिम, सुनन अबू दाऊद, सुनन इब्न-ए-माजा और जामेअ-तिर्मिज़ी में ग़ज़्वा-ए-हिंद के बारे में हदीस का कोई उल्लेख नहीं है और न ही इस संबंध में पवित्र क़ुरआन की कोई आयत मौजूद है। दरअसल, ग़ज़्वा-ए-हिंद का प्रचार कुछ अप्रामाणिक हदीसों की ग़लत व्याख्याओं पर निर्भर करता है, जिनका विश्वसनीय इस्लामी शिक्षाओं से कोई लेना-देना नहीं है। पहले भी समय-समय पर ग़ज़्वा-ए-हिंद को झूठा और आधारहीन प्रचार बताकर व्यापक रूप से निंदा की गई है।

ग़ज़्वा-ए-हिंद की विचारधारा पाकिस्तान और कश्मीर के भीतर कुछ चरमपंथी संगठनों द्वारा फैलाया गया एक घातक ज़हर है, जिसके प्रभाव में आकर कुछ कश्मीरी युवा भी रास्ते से भटक गए हैं। पाकिस्तान में हिजबुल मुजाहिदीन, लश्कर-ए-तैयबा, जैश-ए-मोहम्मद, हरकतुल-मुजाहिदीन, हरकतुल-जिहाद अल-इस्लामी, हरकतुल-अंसार, जमीयतुद्-दावा, अल-बद्र अफ़ग़ान तालिबान इत्यादि हैं जिनकी यह ख़तरनाक विचारधारा है। जबकि अफ़ग़ान तालिबान ख़ुद इससे इनकार करते हैं।

आइए हम उन हदीसों का जायज़ा लें जो ग़ज़्वा-ए-हिंद के संदर्भ में प्रस्तुत की गई हैं। मुहद्दिसीन ने इस सिलसिले की केवल दो हदीसों का उल्लेख किया है। एक हदीस हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि.) से वर्णित है जो कि ज़ईफ़ है, जबकि दूसरी हदीस हज़रत सौबान (रज़ि.) से वर्णित है, जिसे कुछ मुहद्दिसीन ने सहीह और

अन्य ने हसन कहा है। लेकिन वह इसकी व्याख्या करते हुए स्पष्ट करते हैं कि यहां "ग़ज़्वा" का मतलब कोई जिहाद या युद्ध नहीं है, बल्कि यह हिजरी की पहली शताब्दी में भारत में मुस्लिम व्यापारियों और सूफ़ियों का शांतिपूर्ण आगमन है, जो गुजरात, सिंध या केरल आदि के क्षेत्रों में हज़रत उमर और हज़रत उस्मान के समय में हुआ था और उन्होंने यहां के लोगों को अपनी नैतिकता और चरित्र से प्रभावित किया। जबकि अधिकांश मुहद्दिसीन हज़रत सौबान (रज़ि.) द्वारा वर्णित हदीस को भी ज़ईफ़ मानते हैं क्योंकि इस रिवायत के दो रावी बक़िया बिन वलीद और अबू बक्र बिन वलीद जुबैदी भी ज़ईफ़ हैं। इस तरह से इन दोनों अहादीस के ज़ईफ़ होने की संभावना ज़्यादा है।

हदीसों की संख्या के संबंध में, इमाम अहमद इब्न-ए-हंबल के अनुसार प्रामाणिक हदीसों की कुल संख्या 4,400 है, जबकि इमाम अबू दाऊद के अनुसार यह संख्या केवल 4,000 है। सहीह बुख़ारी में शामिल हदीसों की कुल संख्या पुनरावृत्ति सहित 9,086 है। यदि इन पुनरावृत्तियों को हटा दिया जाए तो संख्या केवल 2,761 है। इसी प्रकार, सहीह मुस्लिम में शामिल हदीसों की कुल संख्या 7563 है, जिसमें पुनरावृत्ति भी शामिल है। और यदि पुनरावृत्तियों को हटा दिया जाए तो यह संख्या 3033 ही रह जाती है। सुनन तिर्मिज़ी में रिवायतों की कुल संख्या 3054 है, जबकि सुनन इब्न-ए-माजा में यह संख्या 4341 है। इस प्रकार, सिहा-ए-सित्ता के इन चार प्रमुख संग्रहों में शामिल हदीसों की कुल संख्या (पुनरावृत्तियों के बिना) 4400 के भीतर है। यह इमाम अहमद बिन हंबल के कथन की पुष्टि करता है। इसलिए, हमें यह

कहने में कोई संकोच नहीं है कि ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीस या तो उमय्या काल की है, या चरमपंथी संगठनों द्वारा अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने के लिए इसका दुरुपयोग किया गया था।

“ग़ज़्वा-ए-हिंद” की हदीस के बारे में विद्वानों की राय:

विभिन्न इस्लामी विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वानों ने ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस की प्रामाणिकता को ख़ारिज कर दिया है और दावा किया है कि ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा इस्लाम के मौलिक सिद्धांतों के ख़िलाफ़ है। धर्म और ऐतिहासिक घटनाओं से संबंधित विषयों पर चर्चा करते समय, ऐसे आख्यानों का बारीकी से विश्लेषण करना और विश्वसनीय स्रोतों पर भरोसा करना बहुत ज़रूरी है।

इस भविष्यवाणी को कभी भी ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन या अहले-बैत की शिक्षाओं का हिस्सा नहीं बनाया गया था। पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) का स्पष्ट बयान है कि ख़िलाफ़त अर्थात् इस्लामी हुकूमत मेरे बाद 30 साल तक रहेगी और उसके बाद राजतंत्र अर्थात पारिवारिक शासन व्यवस्था आएगी। इसलिए चाहे उमय्यों का शासन हो या अब्बासियों का, चाहे ओटोमन साम्राज्य हो या मुग़लों का शासन हो। उनकी प्रथा को इस्लामी प्रथा नहीं कहा जा सकता या उनकी सरकार को इस्लामी ख़िलाफ़त नहीं कहा जा सकता क्योंकि ये सभी राजशाही राज्य रहे हैं जिन्होंने सांसारिक तरीक़ों से सरकारें हासिल करने के लिए बल का प्रयोग किया।

बीसवीं सदी के प्रसिद्ध हदीस विद्वान, अल्लामा नसीरुद्दीन अल्बानी की विद्वतापूर्ण बुद्धि ने उन्हें हज़रत अबू हुरैरा की रिवायत को बारीकी से जांच करने के लिए प्रेरित किया और उन्होंने इस हदीस में अंतर्निहित ख़ामियों की ओर इशारा किया जिसने इस हदीस की विश्वसनीयता को कम कर दिया मगर उन्होंने हज़रत सौबान की हदीस के सही होने की पुष्टि की है। लेकिन जैसा कि कहा गया है कि भले ही इस हदीस को सही मान लिया जाए, लेकिन हर पहलू से यह स्वीकार करना ज़रूरी है कि इसकी व्याख्या ग़लत की गई है (अल्बानी के अनुसार, यह पहली शताब्दी हिजरी में भारत में मुस्लिम व्यापारियों के शांतिपूर्ण आगमन को संदर्भित करता है, जो हज़रत उमर और हज़रत उस्मान के समय में गुजरात, सिंध, केरल आदि क्षेत्रों में हुआ था।) जबकि दक्षिण-पूर्व एशिया में मलेशिया के जाने-माने इस्लामिक विद्वान शेख़ इमरान हुसैन का मानना है कि ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित हदीसें प्रामाणिकता से रहित हैं और अगर उन्हें सच माना जाए तो पाकिस्तान को पहले स्वयं पर हमला करना पड़ेगा जो कि अतार्किक बात है।

मुसलमानों के सभी विचारधाराओं के उदारवादी विद्वान ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस के बारे में आश्वस्त नहीं हैं। इन विशेष हदीसों को शिया विचारधारा की हदीस की किताबों में कोई जगह नहीं मिली है। ईरान और इराक़ के विद्वान, चाहे वे खामेनेई साहब के अनुयायी हों या सीस्तानी साहिब के, सभी एकमत से हदीस को ख़ारिज करते हैं। फ़िक़्ह जाफ़रिया से संबंधित किताबों में ग़ज़्वा-ए-हिंद से संबंधित कोई हदीसें नहीं हैं। इसी तरह अहले

हदीस के विद्वान इन हदीसों को कमज़ोर और अविश्वसनीय मानते हैं। यहाँ तक कि अरब विद्वान और मिस्र और भारत के विद्वान ग़ज़्वा-ए-हिंद के बारे में हदीसों की पुष्टि नहीं करते हैं। भारतीय और पाकिस्तानी उपमहाद्वीप के अधिकांश सुन्नी और शिया विद्वान ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस से इनकार करते हैं। स्वयं पाकिस्तान के प्रसिद्ध इस्लामी विद्वान डॉ. जावेद अहमद ग़ामदी और भारत में मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान जैसे इस्लामी विचारकों ने भी ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा को ख़ारिज किया है।

भारत में लगभग छह सौ वर्षों के मुस्लिम शासन के दौरान भी उस काल के मुस्लिम शासकों या विद्वानों ने ग़ज़्वा-ए-हिंद का उल्लेख नहीं किया है। इस्लाम के पूरे इतिहास में, ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन, सहाबा किराम, प्रारंभिक इस्लामी विद्वानों या सूफ़ियों के समय से कोई भी विश्वसनीय स्रोत ग़ज़्वा-ए-हिंद की अवधारणा के अस्तित्व की पुष्टि नहीं करता है। यहां तक कि भारत में हदीस की तालीम की शुरुआत करने वाले शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी के लेख या उनके अनुयायियों के लेख में भी ग़ज़्वा-ए-हिंद की हदीस का कोई ज़िक्र नहीं है।

यहां यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि "ग़ज़्वा" शब्द का अर्थ वह युद्ध है जिसमें पैग़ंबर मुहम्मद (सल्ल.) ने स्वयं इस्लामी सेना का नेतृत्व किया और जीत हासिल की। हालाँकि, यह ज़रूरी नहीं है कि हर लड़ाई में ख़ून-ख़राबा ही हो। उदाहरण के लिए, ग़ज़्वा-ए-ख़ंदक़ और ग़ज़्वा-ए-तबूक दोनों को इस्लामी सेना ने बिना किसी लड़ाई के ही जीत लिया था। अरबी भाषा में, "ग़ज़्वा" के

कई शाब्दिक अर्थ हैं, जिनमें अच्छी शिक्षाओं और रचनात्मक सिद्धांतों का प्रचार व प्रसार शामिल है।

"ग़ज़्वा-ए-हिंद" का उपयोग पाकिस्तानी चरमपंथी संगठनों द्वारा अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं को आगे बढ़ाने के लिए किया गया है। 1971 में पाकिस्तान की सैन्य हार और बांग्लादेश की स्थापना के बाद, पाकिस्तानी सरकार के राजनीतिक संरक्षण में वहां के चरमपंथी संगठनों ने भारतीय सीमा पर अस्थिरता पैदा करने और कश्मीर में जिहाद के नाम पर युवाओं को भड़काने के लिए 1980 के दशक में ग़ज़्वा-ए-हिंद के प्रोपेगेण्डे को जोर-शोर से उठाना शुरू कर दिया था।

ग़ज़्वा-ए-हिंद के भ्रामक और ख़तरनाक प्रचार ने भारत में रहने वाली दूसरी सबसे बड़ी आबादी यानी भारतीय मुसलमानों की देशभक्ति को एक ख़ास वर्ग की नज़र में संदिग्ध बना दिया है, जो हमारे देश, देशवासियों और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक ख़तरनाक अवधारणा है। जिहाद और ग़ज़्वा-ए-हिंद के नाम पर चरमपंथी संगठनों द्वारा भारत के अंदर फ़ौज बढ़ाने की धारणा, जिसका दावा अभी तक सिद्ध नहीं हुआ है, स्थिति को और ख़राब कर देती है। इस निराधार प्रचार के कारण कई मुस्लिम युवाओं को नौकरी से हाथ धोना पड़ा है और व्यापारिक हानि का सामना करना पड़ा है। यह निराधार प्रचार काफ़ी हद तक बढ़ गया है। परिणामस्वरूप, मुस्लिम समुदाय के ख़िलाफ़ नफ़रत और हिंसा की घटनाएं बढ़ गई हैं, जैसे हाल ही में ट्रेन में यात्रा करते समय तीन मुसलमानों की गोली मारकर हत्या कर दी गई। ग़ज़्वा-

ए-हिंद की वकालत करने वालों ने सबसे अधिक हानि भारत के मुसलमानों को ही पहुंचाई है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने भारत की प्रशंसा की है और उल्लेख किया है कि यहां से ठंडी हवाएं आती हैं। इस्लामिक शिक्षाएँ आक्रामक युद्ध या छद्म युद्ध और आत्मघाती हमला जैसे कार्यों की स्पष्ट रूप से निंदा करती हैं और उन्हें ग़ैर-इस्लामी और अमानवीय बताती हैं। इसलिए ग़ज़्वा-ए-हिंद की मनगढ़ंत अवधारणा इस्लामी मूल्यों और नैतिकता के ख़िलाफ़ है। इस समय भारत के मुसलमान ख़ुद को सावधानी से चलते हुए पाते हैं जो कि समय की आवश्यकता है। अतः भारत के बहुसंख्यक सभी मत-मतान्तरों के विद्वानों, इमामों, सज्जादगानों, मुस्लिम नेताओं तथा राजनीतिक एवं सामाजिक विचारकों की यह धार्मिक एवं राष्ट्रीय ज़िम्मेदारी है कि वे एक होकर इस प्रोपेगेण्डे को व्यावहारिक, बौद्धिक, भाषाई और शाब्दिक रूप से ख़त्म करने का प्रयास करें ताकि हमारी राष्ट्रीय एकता और सुरक्षा को सुनिश्चित बनाया जा सके।

डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान

डॉ. हफ़ीज़ुर्रहमान एक इस्लामी स्कॉलर, लेखक, वक्ता और ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन नई दिल्ली के संयोजक हैं। उन्होंने जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली से फ़ारसी साहित्य में पीएचडी की डिग्री प्राप्त की है।

ख़ुसरो फ़ाउण्डेशन
एक नई पहल

भारत अपनी समृद्ध परंपरा को आत्मसात करते हुए धार्मिक, भाषायी एवं सांस्कृतिक विविधताओं के बावजूद 'अनेकता में एकता' के मूलमंत्र का अनुगामी रहा है। इस महान देश का इतिहास मानव-प्रेम के दृष्टान्तों से भरा पड़ा है। यह शक्ति, शांति और भक्ति के गीतों का ही प्रतिफल है कि 'धरती के बासियों की मुक्ती प्रीत में है'। लेकिन यह भी एक दुखद सत्य है कि वर्तमान में भारत कठिन समय से गुज़र रहा है। ऐसे समय में शक्ति के साथ शान्ति और सद्भाव की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है।

ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे देश को किसी की बुरी नज़र लग गई। सामाजिक निकटता दूरियों में परिवर्तित हो रही है और देशवासियों में एक दूसरे के प्रति अंजाना और अदृश्य खिंचाव का बोध हो रहा है। वास्तविकता यह भी है कि देश की अधिकांश जनसंख्या अभी भी इस अलगाव तथा विभाजन का हिस्सा बनने

के लिए तत्पर नहीं है, परन्तु बहुसंख्यक जनता यदि मौन रहती है तो उसका अस्तित्व गहन अन्धकार के गर्त में समा जाता है। वर्तमान में अधिकांश लोग समाज एवं मानवता के दुखों के निवारण के बजाय केवल और केवल 'स्व' की परिक्रमा में व्यस्त हैं। वे स्वयं की पीड़ा से ग्रस्त हैं। वह मनुष्य जो कभी जनसाधारण की आकांक्षा का स्वर हुआ करता था आज अपने आप तक सीमित होकर रह गया है। घृणा, शत्रुता, आघात-प्रतिघात एवं आतंकवाद के व्यापार भारतीय समाज को पूर्णतः छिन्न-भिन्न करने में लगे हुए हैं। इन परिस्थितियों में असहाय एवं निष्क्रिय होकर बैठे रहना संभव नहीं है बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि उन सभी प्रतीकों को पुनर्जीवित किया जाए जिन्होंने ''प्रेम गाथाओं'' और ''प्रेम के ढाई अक्षर'' द्वारा मानव समाज को एक-दूसरे से जोड़ रखा था। जिनका मानना था कि देशवासियों, यहाँ पर जन्म लेने वालों, यहाँ पर निवास करने वालों, यहाँ की नदियों का पानी पीने वालों, यहाँ की मिट्टी में उपजे अन्न से अपना पेट भरने वालों को इस बात का आभास कराया जाए कि उनका धर्म, उनकी भाषा और क्षेत्र भिन्न हो सकते हैं परन्तु माता और मातृभूमि से उनका संबंध इस संसार के सृजनहार और पालनहार की इच्छा का परिणाम है। इसी क्रम में यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि जिस बात से ईश्वर प्रसन्न हो, उसे स्वीकार कर लेने और अपना लेने में ही मानव हित है।

भारत में एक दूसरे को जोड़ने वालों का यदि उल्लेख किया जाए तो उनके नाम एवं कार्यों को संग्रहित करने में देर नहीं लगेगी, परन्तु यदि किसी व्यक्ति से मानव समाज को विभाजित करने

वालों के नाम पूछे जाएँ तो उसे उनके नाम स्मरण करने में और बताने में बड़ी कठिनाई होगी।

इन सबके बावजूद आज मनुष्यों के बीच दूरी, टकराव, हिंसा तथा उपद्रव बार-बार दृष्टिगोचर को क्यों हो रहा है? इसका साधारण सा उत्तर यही है कि हम भूल गए हैं कि हमें क्या याद रखना चाहिए। इस समय हमें ईशदूतों, सूफ़ी-संतों और ऋषि-मुनियों के त्याग, तपस्या, समर्पण और सेवाभाव को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है । उनकी शिक्षाओं तथा उनके उपदेशों को एक बार फिर लोगों तक पहुँचाया जाना चाहिए ।

इसी चिंतन और विचारधारा के आलोक में **'ख़ुसरो फ़ाउंडेशन'** की स्थापना की गई है। हज़रत अमीर ख़ुसरो मध्यकालीन भारत के एक ऐसे लोकप्रिय, मनमोहक एवं सार्वलौकिक व्यक्तित्व हैं, जिन्हें शताब्दियों के पश्चात भी याद रखा गया है और सदैव याद रखा जाएगा । वह सूफ़ी भी थे और सिपाही भी, कवि भी थे और संगीतकार भी, इतिहासकार भी थे और इतिहास बनाने वाले भी। उनके व्यक्तित्व की सार्वभौमिकता और विशिष्टता ने उन्हें न केवल विभिन्न गुणों का वाहक बनाया था अपितु बहुआयामी विशेषताओं से परिपूर्ण किया था । मध्यकालीन भारतीय इतिहास के बड़े बड़े नामियों के निशान मिट गए परन्तु हज़रत अमीर ख़ुसरो आज भी न केवल हमारे इतिहास का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं बल्कि हमारी सांस्कृतिक विरासत के ध्वजवाहक भी हैं। वे लोगों के हृदय में इस प्रकार रचे-बसे हैं कि हर्षोल्लास हो अथवा दुःख एवं पीड़ा के क्षण, हज़रत अमीर ख़ुसरो का नाम तथा उनकी रचनाएँ सदैव अपनी प्रासंगिकता के साथ उपस्थित रहती हैं।

इस गुत्थी को तो मनोवैज्ञानिक ही सुलझा सकते हैं कि हज़रत अमीर ख़ुसरो ने अपनी विभिन्न दरबारी एवं ख़ानक़ाही गतिविधियों के बीच किस प्रकार संतुलन स्थापित किया। यह प्रश्न इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि ख़ुसरो ने यह संतुलन अपने व्यक्तित्व के खरेपन के साथ स्थापित किया था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी सहभागिता और भूमिका खुली पुस्तक की भांति सब पर स्पष्ट थी। सत्यवादिता से परिपूर्ण चिंतन हज़रत अमीर ख़ुसरो के व्यक्तित्व को हमारे समक्ष आदर्श के रूप में उपस्थित करता है।

इस भारतीय तुर्क का देश-प्रेम न केवल आदर्श है, बल्कि स्पृहणीय भी है। ख़ुसरो की दृष्टि में भारत की धरती अदन का स्वर्ग है। यहाँ के लोग प्रत्येक रंग व रूप में उन्हें प्रिय हैं। यहाँ के दरबारों के समक्ष ईरान, तूरान और ख़ुरासान के दरबार फीके दिखाई देते हैं। यहाँ के लोग कृषि, उद्योग, व्यापार के साथ साथ विज्ञान एवं साहित्य की प्रत्येक शाखा, कला के प्रत्येक क्षेत्र और सैन्य प्रशिक्षण के प्रत्येक रूप में अद्भुत एवं अनूठे हैं। एक कट्टर एवं परम्परावादी मुसलमान होने के बावजूद भी उन्हें भारतवासियों का एकेश्वरवादी संप्रदाय एवं विचारधारा प्रिय है। वे कहते हैं कि ''यद्यपि भारतवासी हमारे जैसा धर्म नहीं रखते, परन्तु उनकी अधिकतर मान्यताएं हमारे जैसी हैं।''

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम भारतवासी, भारत की प्रत्येक परंपरा को, चाहे वह धार्मिक हो अथवा सांस्कृतिक, सभ्यतागत हो अथवा भाषायी, अकादमिक एवं शास्त्रीय हो अथवा साहित्यिक, उसे हज़रत अमीर ख़ुसरो की तरह देखें, अपनाएं और उसके लिए अपने आप को समर्पित कर दें। हज़रत

अमीर ख़ुसरो, जिनकी माता भारतीय थीं और पिता तुर्क, एक ऐसे भारतीय हैं जो न केवल भारत की महानता के तराने गाते हैं बल्कि अपने आप को इस मिट्टी का इस प्रकार अभिन्न अंग बनाना चाहते हैं जैसे यह मिट्टी ही सब कुछ हो। देश की मिट्टी से इस लगाव और प्रेम को अल्ताफ़ हुसैन हाली ने इस प्रकार वर्णित किया है:

तेरी इक मुश्त-ए-ख़ाक के बदले
लूँ न हर्गिज़ अगर बहिश्त मिले

ख़ुसरो फ़ाउंडेशन सभी प्रकार के भेदभाव और वैमनस्य से ऊपर उठकर देशभक्ति, मानव प्रेम तथा प्रकृति से निकटता को अंगीकार करके सर्वधर्म सहिष्णु और प्रगति की ओर उन्मुख समाज के निर्माण के लिए प्रयासरत है। शैख़ इब्राहीम ज़ौक़ के अनुसार:

गुल्हाए-रंगा-रंग से है ज़ीनत-ए-चमन
ऐ 'ज़ौक़' इस जहाँ को है ज़ेब इख़्तेलाफ़ से